www.v...in

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक– साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १५ अंक : ३६

सोमवार ९ जून, '६९

अन्य पृष्ठों पर

विवाह का बाजार ४४३

'बालू की भीत' —सम्पादकीय ४४४

विज्ञान और अध्यात्म —विनोबा ४४५

ट्रस्टीशिप : विचार को व्यवहार में लाने की आवश्यकता —अण्णा सहस्रबुद्धे ४४६

सत्ता, पूंजीपति और सरकार —सुरेशराम ४४८

विनोबा-निवास से —कालिन्दी ४४०

ग्रामदान-कानून अविश्वास पर आधारित न हो —निर्मलचन्द्र ४५३

अन्य स्तम्भ

अखबार की कतरनें, पत्रिका-परिचय

आन्दोलन के समाचार

पटना जिलादान

छपते-छपते प्राप्त सूचना के अनुसार बिहार की राजधानी वाला पटना जिलादान १जून' ६९ को घोषित हुआ।

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी–१, उत्तर प्रदेश
फोन : ४२८५

स्त्रियों का स्थान

युगों से किसी-न-किसी तरह पुरुष ने स्त्री पर अपना प्रभुत्व रखा है और इसलिए स्त्री अपने को पुरुष से नीचा समझने लगी है। उसने पुरुष की इस स्वार्थपूर्ण सीख की सचाई में विश्वास कर लिया है कि वह पुरुष से नीची है। परन्तु ज्ञानी पुरुषों ने उसका बराबरी का दर्जा स्वीकार किया है। फिर भी इसमें कोई शक नहीं कि एक खास स्थान पर पहुँचकर दोनों की दिशा अलग-अलग हो जाती है। जहाँ मूल रूप में दोनों एक हैं, वहाँ यह भी उतना ही सच है कि शरीर-रचना की दृष्टि से दोनों में गहरा अन्तर है। इसलिए दोनों का काम भी जुदा-जुदा ही होगा। स्त्रियों के भारी बहुमत पर मातृत्व का कर्तव्य-भार सदा ही रहेगा, लेकिन उसके लिए जिन गुणों की आवश्यकता है उनका पुरुष में होना जरूरी नहीं है। स्त्री निवृत्ति-प्रिय है, पुरुष क्रियाशील। स्त्री स्वभाव से गृह-स्वामिनी है। पुरुष रोटी कमानेवाला है। स्त्री रोटी का रक्षण और वितरण करनेवाली है। वह हर अर्थ में सँभाल रखनेवाली है। मानव-जाति के शिशुओं का पालन करना उसका विशेष और एकमात्र असाधारण अधिकार है। उसकी देखभाल के बिना मानव-वंश अवश्य लुप्त हो जायगा।

यह स्त्री और पुरुष, दोनों के लिए पतन की बात होगी कि स्त्री से घर छोड़कर उसकी रक्षा के लिए बन्दूक उठाने को कहा जाय या ललचाया जाय। यह तो फिर से बर्बरता की ओर लौटना और प्रलय का प्रारंभ कहा जायगा। पुरुष अपनी संगिनी को उसका काम छोड़ देने के लिए ललचायेगा या मजबूर करेगा, तो इसका पाप उसके सिर पर रहेगा। अपने घर को सुव्यवस्थित और साफ-सुथरा रखने में उतनी ही वीरता है, जितनी बाहरी आक्रमण से उसकी रक्षा करने में।

मैंने लाखों किसानों को उनके प्राकृतिक वातावरण में देखा है और आज भी मैं छोटे-से गाँव में उन्हें रोज देखता हूँ; उससे बलात् मेरे ध्यान में दोनों के कार्यक्षेत्र के स्वाभाविक बँटवारे की बात आयी है। स्त्रियाँ लुहार और बढ़ई नहीं होतीं। परन्तु स्त्री-पुरुष, दोनों खेतों में काम करते हैं और सबसे भारी काम पुरुष करते हैं। औरतें घरों को सँभालती और उनकी व्यवस्था करती हैं। वे परिवार के अल्प साधनों मे वृद्धि करती हैं, परन्तु मुख्य कमानेवाला पुरुष ही रहता है। कार्यक्षेत्र के विभाजन की बात मान लेने पर जिन साधारण गुणों और संस्कृति की जरूरत है, वे लगभग दोनों के लिए एक-से ही हैं।

इस महान समस्या को हल करने में मेरा योग यह है कि व्यक्तियों और राष्ट्रों, दोनों के जीवन के हर क्षेत्र में मैंने सत्य और अहिंसा को अपनाने के लिए पेश किया है। मैंने यह आशा बाँध रखी है कि इस काम में स्त्री का असंदिग्ध नेतृत्व रहेगा और इस प्रकार मानव-विकास में अपना योग्य स्थान पाकर वह अपने को नीचा समझना छोड़ देगी।*

मो. क. गांधी

* ('हरिजन' २४-२-'४०)

www.vinoba.in

महातूफान का वेग बिहारदान के करीब पहुँचा

३१ मई तक बिहार के चार सौ चौदह प्रखण्डदानों की घोषणा

पटना, पलामू, भागलपुर, संताल परगना जिलादान की ओर
शाहाबाद, सिंहभूम, हजारीबाग और राँची में तूफान-अभियान की गति और तेज हुई

राँची : बिहार ग्रामदान प्राप्ति समिति के कैम्प कार्यालय, राँची से प्राप्त सूचना के अनुसार बिहारदान का अभियान अब पूरे वेग के साथ पूर्णता की ओर बढ़ रहा है। काम में और गति लाने के लिए डाक्टर दयानिधि पटनायक अपने साथियों सहित पंजाब से आकर जुटे हुए हैं। सर्व सेवा संघ के महामंत्री श्री ठाकुर दास बंग और सह मंत्री श्री नरेन्द्र कुमार दुबे तथा इंदौर सर्वोदय प्रेस सर्विस के सम्पादक श्री महेन्द्र कुमार भी अभियान में भाग लेने के लिए राँची पहुँच गये हैं। बिहार के कार्यकर्ता साथी प्राप्ति की इस आखिरी चढ़ाई में जी-जान से लगे हुए हैं। श्री जयप्रकाश नारायण के दौरे हो रहे हैं। सर्वश्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी तथा कैलाश प्रसाद शर्मा तो राँची में मई के प्रारम्भ से ही डटे हुए हैं।

एक विशेष जानकारी के अनुसार बिहार के आदिवासी क्षेत्रों में प्राप्ति का काम कुछ कठिन हो गया है। क्योंकि उनके मन में यह धारणा बन गयी है कि यह आन्दोलन उनके हित में नहीं है। वर्षों से हो रहे गैर आदिवासी लोगों द्वारा उनके शोषण ने इस धारणा को पुष्ट किया है। आदिवासियों के लिए एक विशेष भूमि-कानून के अनुसार उनकी भूमि की खरीद-बिक्री नहीं हो सकती, फिर भी साहुकारों ने कर्ज की सूद में उनकी जमीनों पर गैर कानूनी कब्जा जमा रखा है, जिससे उनके अन्दर व्यापक असंतोष व्याप्त है। उनका कहना है कि हम तो भूमिहीन हैं नहीं, हमारे क्षेत्र में तो भूमिहीन गैर आदिवासी लोग हैं, इसलिए यह आन्दोलन उन्हीं को भूमि दिलाने के लिए चल रहा है। कार्यकर्ता गाँव-गाँव पहुंचकर उन्हें समझाने का प्रयत्न कर रहे हैं कि यह आन्दोलन हर गाँव को ठोस और मजबूत बनाने के लिए है। गाँव एक होगा तो शोषणमुक्त होगा। किसी मानी में इस आन्दोलन से आदिवासियों का अहित नहीं होनेवाला है। इस भ्रम के निराकरण के लिए आदिवासी नेताओं से भी सम्पर्क करने की पूरी कोशिश चल रही है। आशा है कि इस भ्रम का निराकरण होते ही आदिवासी क्षेत्र अल्पावधि में ही ग्रामदान में शामिल हो जायेंगे।

ग्रामदान-प्रखण्डदान-जिलादान

भारत में (३१ मई '६९ तक)				बिहार में			
प्रांत	ग्रामदान	प्रखण्डदान	जिलादान	जिला	ग्रामदान	प्रखण्डदान	जिला दान-
बिहार	४०,९१८	४१४	९	दरभंगा	३,७२०	४४	१
उत्तरप्रदेश	१५,१९४	८६	२	मुजफ्फरपुर	३,९१७	४०	१
तमिलनाडु	१२,३८५	१२४	४	पूर्णिया	८,१५७	३८	१
उड़ीसा	९,३४८	४०	१	सारण	३,७७१	४०	१
मध्यप्रदेश	५,०९९	२५	२	चम्पारण	२,८९०	३६	१
आन्ध्रप्रदेश	४,११९	१२	—	गया	५,८४५	४६	१
सं० पंजाब (पंजाब, हरि०, हिमा०)	३,६९४	७	—	मुंगेर	३,०४४	३७	१
महाराष्ट्र	३,५५६	१४	—	सहरसा	२,७५१	२३	१
असम	१,५७०	१	—	धनबाद	१,२८४	१०	१
राजस्थान	१,२७०	१	—	पलामू	८०४	२०	—
गुजरात	९२०	३	—	हजारीबाग	१,२८७	८	—
प० बंगाल	७४८	—	—	भागलपुर	५७८	१८	—
कर्नाटक	६९२	—	—	सिंहभूम	१,२६३	५	—
केरल	४१८	—	—	संताल परगना	१,१९४	१६	—
दिल्ली	७४	—	—	शाहाबाद	१७१	६	—
जम्मू-कश्मीर	१	—	—	पटना	४८	२७	—
				राँची	४४	—	—
कुल :	१,००,००६	७२७	१८	कुल :	४०,९१८	४१४	९

संकल्पित प्रदेशदान ७ : (१) बिहार, (२) तमिलनाडु, (३) उड़ीसा, (४) उत्तर प्रदेश, (५) मध्यप्रदेश, (६) महाराष्ट्र, (७) राजस्थान।

एक स्पष्टीकरण : बिहार तथा अन्य कई प्रदेशों से प्रखण्डदान पूरे होने के समाचार मिलते ही उन्हें प्रखण्डदान की संख्या में जोड़ दिया जाता है, लेकिन उतनी जल्दी ग्रामदानी गाँवों की संख्या नहीं मिल पाती, इसलिए कहीं-कहीं के आँकड़ों में प्रखण्डदानों की संख्या के अनुपात में ग्रामदानों की संख्या कम होती है।

विनोबा-निवास, राँची, दिनांक : ३१-५-६९

—कृष्णराज मेहता

www.vinoba.in

सम्पादकीय

विवाह का बाजार

जब विवाह भी बाजार की वस्तु बन गया तो बचा क्या ?

इस वक्त गाँव-गाँव में, शायद घर-घर में, विवाह की धूम है। जहाँ देखिए लोग दावत और नाच में मस्त हैं। यह पूरा एक मौसम ही विवाह का है। खेतिहर देश में किसी वक्त यह रिवाज शुरू हुआ होगा कि जब लोग खेती के काम से खाली हों तो विवाह आदि कामों को पूरा कर लें। इसलिए गर्मी में महीने-डेढ़ महीने का समय इसके लिए अलग कर दिया गया, और उस पर जातियों के पंचे की मुहर लगा दी गयी ताकि किसीको उल्लंघन करने की हिम्मत न हो। लेकिन इस जमाने में जब सघन खेती की प्रक्रियाओं के कारण गर्मी में भी खेती हो सकती है, और जहाँ पानी मिलता जा रहा है वहाँ हो भी रही है, इस तरह शादी के पीछे इतना समय लगाना कोई अर्थ नहीं रखता। पर तर्क में अर्थ रखे या न रखे, जीवन में अभी न जाने कब तक रखता रहेगा। संस्कारों के पीछे समय और श्रद्धा का बड़ा बल होता है।

जिस समाज के मध्यम वर्ग में विवाह एक इतना ऊँचा संस्कार माना गया, जिस विवाह पर आध्यात्मिकता का गहरा-से-गहरा रंग चढ़ाने की कोशिश की गयी, जिसमें पातिव्रत्य, सती, तथा विधवा-विवाह-निषेध आदि धार्मिक-सामाजिक विचारों और विधियों द्वारा पति में पत्नी की अनन्य भक्ति बनाये रखने का विलक्षण प्रयोग हुआ, वह विवाह आते-आते इतना भ्रष्ट, बाजारू, लेन-देन का सौदा कैसे बन गया, यह गहरे शोध का विषय है। 'पति-परमेश्वर' पर सदियों तक हमारी जीवन-व्यवस्था चली और 'पंच-परमेश्वर' पर ग्राम-व्यवस्था, लेकिन अब समता और सहयोग की सामाजिक क्रान्ति के संदर्भ में हमारी परिवार-व्यवस्था और ग्राम-व्यवस्था की आधारभूत मान्यताएँ क्या होंगी ? कुछ बदलेंगी या पुरानी ही रहेंगी ? 'विवाह के बाद प्रेम'—अबतक हमने यह सिद्धान्त मान्य किया। क्या अब 'पहले प्रेम तब विवाह' का सिद्धान्त भी मान्य करेंगे ? यह पूरा विषय गंभीर चिंतन का है। अगर ग्राम-व्यवस्था में आमूल परिवर्तन की माँग है तो विवाह में भी उचित संशोधन की तैयारी रहनी चाहिए—कम-से-कम सामाजिक क्रान्तिकारी की।

विवाह के मौसम में बाजार में चले जाइए और धीरज के साथ आँखें खोलकर देखिए। देहात में चले जाइए और सहानुभूति के साथ लड़कीवाले से बातें कीजिए, लड़केवाले से बातें कीजिए। पूछिए : 'विवाह के लिए रुपया कैसे इकट्ठा किया ?' उत्तर में आपको कर्ज, कष्ट और कपट की अनंत कथा सुनने को मिलेंगी। लेकिन गृहस्थ को यह सब स्वीकार है। क्योंकि उसे बेटी या बेटे का विवाह करना है, और समाज में रहना है।

बाजार, बारात, वेश्या और बोतल, इन चारों को अगर एक नाम देना हो तो 'विवाह' दे सकते हैं। गाँव का आदमी बाजार जाता है। घर का अनाज बेचता है, घराऊँ गहने गिरवी रखता या बेचता है। रुपये जुटाता है। और उस रुपये से खरीदता क्या है ? अपनी औकात से कहीं ऊपर शौकीनी की चीजें—चमक-दमकवाले कपड़े, जूते, ट्रान्जिस्टर, पाउडर, क्रीम, बर्तन, आदि। इनके साथ-साथ शराब की बोतलें भी खरीदता है, क्योंकि उसके दरवाजे पर जब कलकत्ता-बम्बई में धूप-पानी की कमाई करनेवाले या शहर के पढ़े-लिखे और हाकिम लोग बारात में आयेंगे तो उनके मन-बहलाव के लिए बोतल चाहिए और बोतल के साथ वेश्या भी चाहिए जो मनचले गानों और चुहलबाजियों से उनके अंदर गुदगुदी पैदा करती रहे। नाच ही तो ऐसी चीज है जिसमें बूढ़े, जवान, बच्चे, सब बराबरी के दर्जे पर शरीक होते हैं। मनुष्य को मनोरंजन चाहिए, और खुशी के वक्त खुशी का वातावरण भी चाहिए, लेकिन विवाह के वक्त जो नकली रईस लोग नोकीली मूँछें निकालकर, या अगर वही हुई तो रोगन से नोकीली बनाकर, महफिल में बैठते हैं, उनकी खिदमत के लिए खवास चाहिए और तफरीह के लिए सुरा और सुन्दरी। तारीफ तो यह है कि यह सारा इन्तजाम लड़कीवाले को करना है, क्योंकि लड़की का बाप बनने का उसने अक्षम्य अपराध जो किया है !

हम खादी में विश्वास रखनेवाले लोग हिसाब लगाते हैं, और गाँववालों से कहते भी हैं, कि कपड़े के लिए कितना पैसा गाँव से शहर में चला जाता है। ठीक है, जाता है। लेकिन कभी हमने यह हिसाब भी लगाया है कि विवाह के कारण कितनी दौलत गाँव से शहर में जाती है, गरीब का कितना कर्ज बढ़ता है, कितनी जमीन इधर-की-उधर हो जाती है ? कितनी श्राद्ध के कारण जाती है, और कितनी शिक्षा के कारण ? शायद इन चीजों में हम खुद भी शरीक हैं ! इन कामों में लगनेवाली करोड़ों नहीं, अरबों रुपयों की पूँजी किस काम में लगती है ? बाजार-भाव बढ़ाने में, निरर्थक उपभोग में, अनुत्पादक कामों में। और, यह हाल उस देश में है जहाँ एक-एक परिवार पूँजी के लिए तरस रहा है। किसान के घर में ढंग की एक कुदाल भले ही न हो, लेकिन बेटे के विवाह में मिला एक ट्रान्जिस्टर कोने में पड़ा हुआ मिलेगा। विवाह में ट्रान्जिस्टर लगभग उतना ही जरूरी हो गया जितना जरूरी सिन्दूर। बेटे की बहू की, जो ट्रान्जिस्टर के साथ घर में आयी थी, बीमारी में दवा के लिए पैसा भले ही न जुटे, लेकिन ट्रान्जिस्टर के लिए बैटरी तो चाहिए ! गरीब पड़ोसी अमीर से नफरत करता है, उसके खिलाफ नारे लगाता है, और मौका पड़ने पर उससे लड़ने के लिए भी तैयार होता है, लेकिन विवाह पड़ता है तो उसी अमीर के हाथों में अपने गले की फाँसी की रस्सी सौंप देता है। जेवर-जमीन गिरवी रखेगा, बेचेगा, दूने-चौगुने सूद पर कर्ज लेगा। पैसेवाले में दिखाऊ 'सहानुभूति' के साथ इतनी बुद्धि भी है कि सूद पर सूद जोड़ता जाय और कर्ज को पुश्त-दर-पुश्त कभी अदा न होने दे। पैसेवाला शोषण करना जानता है और विवाह करनेवाला शोषण कराना जानता है और विवाह के मंच पर शोषक और शोषित का पूर्ण मेल है। विवाह में शोक भी होता है, और बेबसी भी होती है। दोनों में पैसेवाले के लिए अवसर है। ⇒

ऐसी भूमिका और ऐसे वातावरण में विवाह होता है—जीवन का एक पवित्र संस्कार, धर्म का एक महान कृत्य ! सच बात तो यह है कि अगर परिवार की बरबादी, समाज की कुसंस्कारिता, और बच्चों के कुशिक्षण की कोई सम्मिलित योजना बनानी हो तो हमारे विवाह से बढ़कर दूसरी योजना मुश्किल से बनेगी। हमारा विवाह अस्पृश्यता से छोटा कलंक नहीं है।

हर आदमी मानता है कि विवाह की प्रथा दूषित है। हर आदमी चाहता है कि यह प्रथा बदले। लेकिन हर आदमी बेबस है—अपने संस्कारों से, समाज की व्यवस्था से। कोई आगे नहीं बढ़ना चाहता—'क्रान्तिकारी' युवक भी नहीं ! विवाह सामन्तवाद का सांस्कृतिक गढ़ है, ठीक उसी तरह जैसे हमारी शिक्षा अंग्रेजी साम्राज्यवाद का सांस्कृतिक मोर्चा थी, और अंग्रेजियत की आज भी है। निजी स्वामित्व पूँजीवाद की रीढ़ है। आज हम ग्रामदान से उस रीढ़ को तोड़ने में लगे हुए हैं। भूमि, शिक्षा और विवाह की एक जीवन-त्रयी है। जब-तक यह त्रयी रहेगी पुराना समाज बना रहेगा। समग्र सामाजिक क्रान्ति के लिए इन तीनों का बदलना जरूरी है।

'बालू की भीत'

तिरुपति में हमारे अध्यक्ष ने संगठन की कमजोरी की ओर बार-बार ध्यान दिलाया। अपने भाषण में उन्होंने यहाँ तक कहा कि सर्व सेवा संघ बालू की भीत पर खड़ा है। बालू की भीत थोड़ी देर के लिए चाहे जितनी बड़ी और मोटी दिखाई दे, लेकिन उसमें कोई शक्ति नहीं होती। वह किसी क्षण गिर सकती है।

यह सही है कि हमारे पास विचार का बल चाहे जितना हो, संगठन का बल बिलकुल नहीं है। जिस लोक-सेवक और सर्वोदय मंडल पर हमने अपनी दुनिया बसाने की कोशिश की थी या वह बालू की भीत की तरह ढह गया। आज कहाँ है लोकसेवक और कहाँ है सर्वोदय मंडल ? और, अगर कुछ हैं भी तो कितने हैं ? क्या इतने थोड़े, और इस तरह बने, लोकसेवकों और सर्वोदय मंडलों से कोई संगठन चल सकता है, और उसकी शक्ति बन सकती है ?

जो हाल लोकसेवकों और सर्वोदय मंडलों का है, वही हाल ग्रामसभाओं का है। आँकड़े छलिया होते हैं। हम आँकड़ों के चक्कर में न पड़ें। लोकसेवक, सर्वोदय मंडल, शान्ति-सैनिक, ग्रामसभा—ये सब गुणात्मक इकाइयाँ हैं। उनके गुण का प्रमाण उनकी संख्या नहीं है।

ग्रामसभा हमारे आन्दोलन का 'कन्सेन्सस' है, और लोकसेवक 'कान्शंस'। कन्सेन्सस का संगठन बन सकता है, और बनना भी चाहिए, लेकिन कान्शंस का तो भाईचारा ही बन सकता है। ये दोनों आन्दोलन की शक्ति के स्रोत हैं। ये ही दोनों सैनिक-शक्ति के मुकाबिले नागरिक-शक्ति के मोर्चे भी हैं। दोनों को मिलाकर ग्रामस्वराज्य का संयुक्त मोर्चा बनता है।

तिरुपति के अधिवेशन में संगठन की कमजोरी तीव्रता के साथ महसूस की गयी। उस विषय पर गहराई के साथ विचार करने के लिए एक समिति भी नियुक्त की गयी।

समिति की नियुक्ति अपनी जगह ठीक है, लेकिन असली काम वहाँ है जहाँ ग्रामदान हैं। बिहार का राज्यदान दूर नहीं है देश भर में डेढ़ दर्जन जिलों के दान हो चुके हैं अब सघन क्षेत्र लेकर ग्राम-सभाओं के संगठन द्वारा ग्रामस्वराज्य की शक्ति प्रकट करने का अभियान शुरू होना चाहिए। कब शुरू होगा ? प्रतीक्षा किस बात की है ?

प्राप्ति पर अधिक-से-अधिक शक्ति लगाना आवश्यक है, लेकिन प्राप्त क्षेत्रों की उपेक्षा सर्वथा अनुचित है। सोचना चाहिए कि दोनों काम साथ-साथ कैसे चलेंगे ? ●

अखबार की कतरनें

अल्प विकसित या अति शोषित ?

भारत तथा उसकी तरह के अन्य देशों को अल्प विकसित कहा जाता है। दुनिया के धनी देशों में कई सेवा-संस्थाएँ हैं, जो दान का धन इकट्ठा करती हैं, और अपनी ओर से गरीब देशों को दान देती हैं। हम इस दया के लिए कृतज्ञ हैं, लेकिन धनी देशों के लोग यह क्यों नहीं महसूस करते कि हमारी गरीबी में उनके द्वारा होनेवाले हमारे शोषण का कितना ज्यादा हाथ है ? वे दान भले ही न दें, पर यह शोषण तो बन्द करें !

बात होती है व्यापार (ट्रेड) की, सहायता (एड) की, और प्रतिरक्षा (डिफेंस) की।

व्यापार क्या है ?

व्यापार दो तरह का होता है :

१. धनी देशों की कम्पनियों का गरीब देशों के उपभोक्ताओं के साथ व्यापार। वे अपनी शर्त पर व्यापार करती हैं, और मन-माना मुनाफा लेती हैं। उसे बाजार कहते हैं।

२. गरीब देशों की कम्पनियों का धनी देशों के उपभोक्ताओं के साथ व्यापार। इसमें कोटा होता है, टेरिफ होती है। कीमतें तय होती हैं। इसे संरक्षण (प्रोटेक्शन) कहते हैं।

सहायता क्या है ?

सहायता भी दो प्रकार की होती है—

१. गरीब देशों की सरकारों को अनुदान या कर्ज। किसलिए ? सड़क, बन्दरगाह, कारखाने बनाने के लिए, जो व्यापार के लिए दी जाती है। इसे विकास (डेवलपमेंट) कहते हैं।

२. गरीब देश की सेनाओं के लिए बन्दूक, टैंक आदि, जिनकी मदद से सरकारें जनता के सीने पर सवार रहें। इसे 'शान्ति-रक्षा' कहते हैं।

प्रतिरक्षा क्या है ?

प्रतिरक्षा के भी दो प्रकार हैं। लेकिन प्रतिरक्षा धनी देशों के लिए है।

१. अन्य धनी देशों से संभावित युद्ध के लिए सैनिक-तैयारी।

२. गरीब देशों में धनी देशों के हितों की रक्षा। गरीब देशों में जब कभी जनता अपनी सरकार पर नियंत्रण करने की कोशिश करती है तो धनी देशों को प्रतिरक्षा (डिफेंस) की जरूरत होती है —'पीस न्यूज'

www.vinoba.in

विज्ञान और अध्यात्म : बाह्य और आंतरिक ज्ञान के स्रोत

विनोबा

अभी मैं श्रोताओं के चेहरे देख रहा था, जैसी मुझे आदत है। किसी एक का चेहरा दूसरे के समान नहीं है। अंगूठे पर की रेखाएँ भी अलग-अलग लोगों की अलग-अलग होती हैं। इस तरह दुनिया में ३२० करोड़ लोगों के ३२० करोड़ अंगूठों के 'प्रिंट' होंगे। पुलिस को अंगूठे का निशान मिल जाय तो वे उससे चोर पकड़ सकते हैं, यह अद्‌भुत विचार है। इंग्लैण्ड में प्रस्ताव आया कि सबके अंगूठे के निशान लेकर सरकारी दफ्तर में रखे जायँ, ताकि चोर पकड़ने में मदद मिले, परन्तु वह प्रस्ताव वहाँ के लोगों ने माना नहीं, क्योंकि उसमें पहले ही सबको चोर मानने की बात है।

एक पीपल का पेड़ है, उसमें बहुत-सी पत्तियाँ हैं, लेकिन किसी भी पत्ते की शक्ल एक-जैसी नहीं है। अगर फोटो लिया जाय तो हर पत्ता भिन्न होगा याने उसमें विविधता होगी। एक ओर सृष्टि में इतनी विविधता है और दूसरी ओर अंतर में समान अनुभूति आती है। रामदास स्वामी ने आत्मा की एकता के बारे में कहा है : 'सर्प जाणोन डंखूं आला। प्राणी जाणोन पलाला। दोही-कडे जाणिवेला। वरें पहा।'

ज्ञानरूपेण आत्मा सिद्ध होता है। ज्ञान सर्वत्र है। साँप दंश मारने के लिए हमला करने आया, जो जान-बूझकर व्यक्ति पर हमला किया, और व्यक्ति जान बचाने को भागा, तो ज्ञानपूर्वक भागा। इसलिए ज्ञान दोनों में समान है। दोनों में ज्ञानरूपेण आत्मा एक है। इससे आत्मा की एकता सिद्ध होगी। यह एक युक्ति है। युक्ति से सिद्ध हो जाय कि बकरी और शेर की आत्मा समान है, तो आत्मज्ञान बड़ा आसान हो जायगा।

जैसे ज्ञान-शक्ति चिद्‌रूपेण सर्वत्र है, वैसे आनंदरूपेण भी सर्वत्र है--कोई भी प्राणी बिना आनंद के नहीं जीते। सबको कुछ-न-कुछ आनंद है।

पटना में प्रखण्डदान की घोषणा के बाद श्रोताओं को बाबा की वाणी से आनंद मिल रहा था, तो उधर मच्छर बाबा का शरीर-रस लेकर आनंद प्राप्त कर रहे थे! आनंद-रूपेण अभिव्यक्ति दोनों में समान है, इसलिए आनंद सर्वत्र भरा है। जो सर्वत्र भरा है उसे प्राप्त करने की कोशिश करते हैं, वे मूर्ख हैं। आनंद तो प्राप्त ही है। कोशिश आनंद-शुद्धि की करनी चाहिए।

एक था महारोगी की सेवा करनेवाला क्रिश्चियन। वह १५-२० साल से सेवा करता था, और उसमें आनंद मानता था। परन्तु जब उसको महारोग हो गया तो लोगों ने कहा--'बड़े दुःख की बात है कि आपको भी महारोग हो गया' तब उस क्रिश्चियन सेवक ने कहा--'दुःख नहीं, परमात्मा की बड़ी कृपा है कि अब मुझे उन महारोगियों के अंतर-अनुभव प्राप्त हो सकेंगे। जो पहले सेवा करते हुए भी मुझे प्राप्त नहीं होते थे। इसलिए दुःख नहीं, मुझे आनंद है।' एक जैन साधु ने जाहिर किया कि संथारा लेकर निर्जला करेंगे, आमरण अनशन करेंगे, यानी मरने तक नहीं खायेंगे। उस साधु ने ४५ दिन के बाद देह छोड़ी। इसे देश ने आत्म-हत्या माना नहीं। लेकिन एक जैनी भाई मुझसे मिलने आये तो मैंने सुझाया कि 'वे पानी पीते रहें।' लेकिन मेरी यह सूचना उस जैनी भाई ने देर से उन्हें पहुँचायी। उन्हें लगता था कि इससे पुण्यकार्य में बाधा पहुँचेगी और उत्तम आनंद कम हो जायगा। जब मैं उनसे मिलने गया तो उन्होंने कहा कि--'अब तो पानी भी गले से नीचे नहीं उतरता।' फिर दो दिनों में देह छोड़ी। तो मरना खास बात नहीं, खानेवाले और न खानेवाले, सब मरते हैं। इसलिए प्रयत्न आनंद-शुद्धि का करना चाहिए।

एक आदमी अभी आया और उसने मुझसे कहा कि मेरे पास पाँच एकड़ जमीन है, वह सब दान देना चाहता हूँ। उसमें वह अपना आनंद मानता है। तो उसे दानानंद है। कोई लूटानंद होता है, जो लूटने में आनंद मानता है। इसलिए प्रयत्न आनंद-शुद्धि का करना चाहिए।

हमारे एक डाक्टर मित्र थे, वह सब रोगों का उपचार नमक से करते थे। जब संन्यासी हुए तो अपना नाम भी लवणानंद रखा। मैंने कहा कि आनंद में लवण क्यों रखते हो?

इस प्रकार मैंने आपके सामने एक विषय रखा कि आनंद को शुद्ध करना चाहिए। अब प्रश्न है--आनंद को शुद्ध कैसे किया जाय? आनंद को शुद्ध करने को ही अध्यात्म कहते हैं।

मैं बार-बार समझाता हूँ कि यह दान आनंद-शुद्धि के लिए है। ईसा का महावाक्य है--'इट इज मोर ब्लेस्ड टु गीव दैन टु रिसीव' (प्रदान करना प्राप्ति करने से अधिक सुखकारक है।) इसमें आनंद की शुद्धि और वृद्धि, दोनों होती है।

विज्ञान बाहर की दुनिया का ज्ञान कराता है और आत्मज्ञान अंतर का ज्ञान कराता है। अंत में देखा जाय तो दोनों अध्यात्म ही हैं। विज्ञान में तटस्थ बुद्धि से साक्षी-रूप रहकर देखना होता है। जैसे आत्मज्ञानी अंतर-शोध के लिए अपरिग्रही व ब्रह्मचारी रहता है वैसे वैज्ञानिक भी सत्य की शोध में पूर्ण तन्मयता से लगता है। विषय-भोग छूट जाते हैं और जीवन संयमी हो जाता है। वैज्ञानिक न्यूटन के जीवन की एक घटना है--न्यूटन छोटे-छोटे कागज के टुकड़ों पर अपने प्रयोग के अनुभव लिखता था। कई दिनों के बाद उसका प्रयोग पूरा हुआ तो वह कोठरी से बाहर घूमने निकला। बहुत दिनों से कमरे की सफाई नहीं हो पायी थी। इसलिए अवसर पाकर नौकर सफाई करने के लिए कमरे में गया। उसने देखा कि बहुत-से छोटे-छोटे कागज के टुकड़े पड़े हुए हैं। उसने कमरे की सफाई करके सारे कागज के टुकड़ों को बाहर डालकर जला दिया। जब न्यूटन वापिस लौटा तो देखा कि उसके प्रयोग के अनुभव लिखे हुए कागज के टुकड़े नहीं हैं। तो उसने नौकर को बुलाकर पूछा। नौकर ने कहा कि कमरे की सफाई की और उन कागज के टुकड़ों को कचरा समझकर बाहर ले जाकर जला दिया। तब न्यूटन ने शांति से कहा—'देखो, दुबारा→

ट्रस्टीशिप : विचार को व्यवहार में लाने की आवश्यकता

गांधीजी की ट्रस्टीशिप की कल्पना थी कि जिनके पास सम्पत्ति है उसे वे अपनी न मानें, बल्कि धरोहर मानकर उसकी मालिकी की भावना से अपने को मुक्त कर लें। उस समय श्री जमनालाल बजाज आदि कुछ धनीमानी व्यक्तियों ने इस विचार को चालना दी, पर कालान्तर में इस दिशा में प्रगति न हो सकी।

मैं कभी-कभी सोचता हूँ कि मात्र फैक्टरियों के लिए ही ट्रस्टीशिप की बात सोचते रहना ठीक नहीं है। उसका शुभारम्भ व्यक्ति-व्यक्ति के जीवन, फिर व्यक्ति और समाज से सम्बन्धित जीवन-मूल्यों तथा सामाजिक प्रवृत्तियों एवं रचनात्मक संस्थाओं में होना चाहिए।

गांधीजी ने चरखा संघ शुरू किया तो उसके रचनात्मक कार्यकर्ताओं के लिए जो नियम बनाये उनमें एक अपरिग्रह भी था। उस समय तय था कि ज्यादा-से-ज्यादा २५ रु० दिया जाय और खर्च करके अगर कुछ बचे तो कार्यकर्ता संस्था को वापिस लौटा दे। गांधी सेवा संघ के सम्मेलनों में अपरिग्रह को लेकर काफी बहसें हुईं। लोगों का कहना रहा कि अब अपरिग्रह को हमने एकादश व्रतों में दाखिल किया है, उसका जीवन में पालन करने का संकल्प किया है तो हमें उस पर आचरण करना चाहिए। उस समय गांधी सेवा संघ के अध्यक्ष के नाते श्री किशोरलाल भाई ने 'रूलिंग' दी कि हर व्यक्ति एक साल के लिए, अर्थात् जो कमाई आज वह करता है उतनी वह एक साल के लिए आपद-काल की दृष्टि से संग्रह करके रख सकता है। महाराष्ट्र में एक रामदास स्वामी हुए हैं, उन्होंने साधु पुरुषों के लिए नियम बना रखा था कि किसी जगह तीन दिन से ज्यादा रहना नहीं और तीन दिन से अधिक के लिए संग्रह नहीं करना चाहिए।

बीमा : जनता द्वारा

गांधीजी के सामने सवाल रखा गया कि क्या हमारे खादी के स्टाक का बीमा कराया जाय? उन्होंने कहा, नहीं। खादी के कार्यकर्ता अपना जीवन बीमा कराये? उन्होंने कहा, नहीं। हमारा बीमा जनता ही है। यदि हमारा रक्षण जनता करने को तैयार नहीं तो उसे मैं खादी नहीं मानूंगा। सिद्धान्त की दृष्टि से प्रोविडेण्ट फंड के विचार से भी वे सहमत नहीं थे, पर बाद में 'सर्विस रूल्स' बने और उनको उन्होंने कबूल भी किया। चरखा संघ में एक व्यक्ति ने दो हजार रुपये का गबन कर दिया। बापू के पास पेशी हुई। बापू ने पूछा, 'क्या ऐसा हुआ है?' उसने कबूल किया और मकान बन्धक रखकर रुपया लौटाया भी। अन्त में बापू ने एक और फैसला किया कि अब यह व्यक्ति चरखा संघ में नहीं रहेगा, पर

अण्णा सहस्रबुद्धे

श्री जमनालाल बजाज को कह दिया कि इसे व्यापारिक संस्थाओं में काम दो। इस पद्धति से वह सुधर भी गया। रचनात्मक संस्थाओं और उन संस्थाओं के कार्यकर्ताओं की तरफ देखने की बापू की दृष्टि ही कुछ और थी।

जीवन में ट्रस्टीशिप कैसे सधे?

व्यक्ति जिस जगह रहता है वहाँ आस-पास के परिवारों की कम-से-कम आमदनी सौ रुपये मासिक है तो उसे अपने परिवार का अधिक-से-अधिक पाँच सौ रुपये मासिक से ज्यादा खर्च नहीं करना चाहिए। यदि उसकी आमदनी पाँच सौ रुपये मासिक से अधिक होती है तो फिर उस अधिक आय का उसे ट्रस्टी बनना चाहिए। श्री जमनालाल बजाज स्वयं पाँच सौ रुपये मासिक लेते थे और बाकी का उन्होंने ट्रस्ट बनाकर रखा था। एक जमाना था कि उन्हें 'कॉटन प्रिन्स आफ बेरार' (बरार के रुइया राजकुमार) कहा जाता था। स्पेशल ट्रेन से आया-जाया करते थे। वाइसराय को दावतें दिया करते थे, पर ट्रस्टीशिप की भावना का उनके जीवन में प्रवेश हुआ तो वे गांधीजी के पाँचवें पुत्र कहलाये।

ट्रस्टीशिप की कल्पना कागज पर या किसी कल-कारखाने की मशीनरी और फर्नीचर पर थोड़े ही उतरनेवाली है। वह सबसे पहले व्यक्ति के जीवन में उसके दैनंदिन कार्यकलापों में दाखिल होगी तब वह उस व्यक्ति से सम्बन्धित संस्था में प्रविष्ट होगी। गांधीजी का स्वयं का जीवन इसका उज्ज्वल उदाहरण है। उनको या कस्तूरबा को किसी रिश्तेदार ने भी भेंट में कुछ दो-चार रुपये भी दिये तो वह आश्रम के हैं और खुद को जो जरूरत होगी वह आश्रम से लेंगे, ऐसे कठोर नियम का उन्होंने पालन किया।

चरखा संघ, ग्रामोद्योग संघ, हरिजन सेवक संघ, गो-सेवा संघ आदि सभी रचनात्मक संस्थाएँ ट्रस्टीशिप के आधार पर उन्होंने खोली हैं, ऐसा वे दावे के साथ कहा करते थे। इनका सिद्धान्त ही 'नो प्राफिट, नो लॉस' (न लाभ, न हानि) था और यदि कुछ लाभ हुआ भी तो वह काम करनेवालों को मिलना चाहिए। काम करनेवालों में, जैसे चरखा संघ है तो, कत्तिन और बुनकरों को लाभ मिलना चाहिए। १/१० भाग संस्था के लिए माना जाय और ९/१० लाभ 'स्पीनर्स बेनीफिट फण्ड' (सूतकार कल्याण-कोष) में जमा किया जाय, जिससे सुधरे हुए औजार, कत्तिन और बुनकरों की तालीम के लिए स्कूल, दवाखाना, हफ्ते में बाजार की सुविधा आदि का प्रबन्ध किया जाय। प्रबंधक-वर्ग को बोनस आदि की बात बापू ने कतई स्वीकार नहीं की। उनकी मंशा तो इस प्रबंधक वर्ग को कम-से-कम रखने की थी।

जब गांधी सेवा संघ बना तो उन्होंने इसे यही काम सौंपा कि यह देखा जाय कि रचनात्मक संस्थाओं में ट्रस्टीशिप के आधार पर काम कितना चला। उसमें क्या-क्या

←बिना पूछे ऐसा काम नहीं करना। वे कागज मेरे काम के थे।' जीवन की अमूल्य शोध-सामग्री जल जाने पर भी काम-क्रोध का नाम नहीं। तो, वैज्ञानिक को भी काम-क्रोध पर जय प्राप्त हो जाती है। फिर लोगों ने उससे कहा—"आप तो महान् गणितज्ञ हैं, आपको गणित का काफी ज्ञान है।" तो उसने कहा—"गणित का ज्ञान विशाल समुद्र जैसा है। उस समुद्र के एक बिन्दु को समुद्र मानें, तो उसके बिन्दु-सदृश ज्ञान भी मुझे नहीं है।" न्यूटन की नम्रता और निरहंकारिता का यह नमूना है। इसलिए विज्ञान भी अंत में आत्मज्ञान या अध्यात्म ही है।

देवघर : ४-५-'६९

www.vinoba.in

कमियाँ रहीं ? आगे काम चलाना हो तो उसका क्या रूप हो ? इन सब पर गांधी सेवा संघ शोध करे, ऐसी उनकी इच्छा थी। शोध करने के उपरान्त इस पर भी विचार करे कि वह समाज में कैसे विकसित हो ? पर उन दिनों सबका ध्यान मुख्य रूप से स्वतंत्रता-प्राप्ति की ओर था, इसलिए इस दिशा में गहराई से सोच-विचार सम्भव नहीं हुआ।

गांधीजी जब हरिजन-दौरे पर निकले और खादी-केन्द्रों में जाकर कत्तिनों और बुनकरों की गरीबी उन्होंने देखी तो एक-दम दृढ़ निश्चय के साथ कहा, इनको जीवन-वेतन के रूप में आठ आना मजदूरी दी जानी चाहिए। सवाल आया कि इससे खादी महँगी होगी तो उनका कहना रहा, कि हम ट्रस्टी बने हैं, कोई 'मिडिलमैन' (दलाल) या एजेण्ट थोड़े ही हैं। महँगी पड़ेगी तो महँगी बेचेंगे।

जिस तरह गरीबों को उठाने में उनका स्पष्ट चिन्तन चलता था उसी तरह अमीरी कम करने में भी उनका चिन्तन बिलकुल खुला और साफ था। उन दिनों आश्रम में कुछ व्यापारी तथा कुछ सम्पन्न समझे जाने-वाले लोग आश्रमवासी के रूप में दाखिल हुए। भोजन में आधा सेर दूध दिन भर में सबको मिल जाता था, इस पर कुछ लोगों ने चर्चा चलायी कि ऐसा देहातों में तो संभव नहीं; तो बापू का उत्तर था, जो दूध के बजाय मूंगफली पर चला सकते हैं उनको खुद से निर्णय लेना चाहिए। वैयक्तिक रूप से घटा सकते हैं। गांधीजी आश्रमों में मनोवृत्ति-संशोधन और रचनात्मक प्रवृत्तियों में काम करने की प्रक्रिया के माध्यम से ट्रस्टीशिप की कल्पना को साकार करना चाहते थे।

सामाजिक मूल्यों में ट्रस्टीशिप की भावना

ईसाइयों में एक धार्मिक परम्परा है कि प्रातः वे प्रभु से याचना करते हैं कि वह उन्हें दिन भर की अपनी रोटी दे। यानी काम वे करेंगे और रोटी की प्रार्थना ईश्वर से करेंगे। गांधीजी ईश्वर को समाज या मानव-समुदाय के रूप में देखते थे। आज समाज में आर्थिक विषमता है, क्या यह कायम के लिए समाज में अविभाज्य अंग के रूप में रखना चाहते हैं ? जो वर्ग-संघर्ष में विश्वास रखते हैं उनका मानना है कि वह अन्तरिम रूप में रहेगी। गांधीजी हृदय-परिवर्तन में विश्वास करते थे और उसके माध्यम से समाज-परिवर्तन करना चाहते थे। पर यह सब केवल सिद्धान्त से थोड़े ही होनेवाला है। वे मानव-मानव में विरोध को स्वीकार नहीं करते, इसलिए सह-योग का रास्ता बताते हैं। यहीं सामाजिक मूल्यों का प्रश्न खड़ा होता है। इतना तो मानना ही होगा कि औद्योगीकरण के साथ-साथ विषमता बढ़ी है इसलिए एकमात्र रास्ता सामाजिक मर्यादाओं और सामाजिक नियंत्रण का है। जापान में नियम है कि गाँव में स्कूल की इमारत से बड़ा कोई मकान न बनावे। जिसके पास ज्यादा पैसा है वह स्कूल को दान करे। विद्यालयों में जब कोई नयी फैकल्टी खड़ी करनी होती है तो सारी व्यवस्था गाँववाले खुशी-खुशी करते हैं, फिर शिक्षा की माँग करते हैं। वहाँ स्कूल के बच्चों की पोशाक समान रहती है। किस उम्र तक के बच्चों को बाल रखने चाहिए, नहीं रखने चाहिए, यह भी समाज तय करता है। खेत में रोपाई के समय स्कूल, कल-कारखाने, दफ्तर बन्द करके सब खेतों में काम करते हैं। सफेदपोशवाली बात वहाँ नहीं है।

ट्रस्टीशिप और कल्याणकारी राज्य

कानून बनाने और इनकम टैक्स व सुपर टैक्स से ट्रस्टीशिप का विकास नहीं होनेवाला है। कल्याणकारी राज्य के ध्येयवाद में ट्रस्टीशिप के लिए जगह नहीं है। यह बात सुनने में बुरी लग सकती है, पर यह सच है कि आज बूढ़े लोगों को सम्हालने की जिम्मे-दारी समाज के बजाय राज्य की कही जाती है।

विधवाश्रम, अनाथाश्रम आदि आज सरकार चलाती है, समाज की कोई जिम्मे-दारी नहीं। सरकारी नौकरों को पेंशन राज्य देता है, बच्चों पर कोई जिम्मेदारी नहीं। यह सब गहराई से देखा जाय तो क्या है ?

पुराने जमाने में हमारे सामाजिक मूल्य थे कि अतिथियों को ही नहीं, बल्कि गोग्रास नित्य निकालकर उन्हें भी अपने जीवन में शामिल किया है। खाने का ही नहीं, बल्कि पहले शिक्षा की जिम्मेदारी माँ-बाप और समाज ने अपने ऊपर ली थी आज उसे सरकार को सौंपकर हम निश्चिन्त बैठे हैं और क्या परिणाम हो रहा है, वह हम-आप किसी से छिपा नहीं है।

जापान पूँजीवादी देश है, फिर भी वहाँ मकान हाथ से बने कागज के और बड़े-से-बड़े आदमी के यहाँ पुवाल की हाथ से बनी चटाइयाँ बिछी मिलेंगी, क्योंकि इससे तीन-चार लाख लोगों को काम मिलता है।

गांधीजी स्वतंत्र भारत में संस्थाओं को सामाजिक मूल्यों से मुक्त करके काम लायक काम और जरूरत के मुताबिक भोजन देकर एक अहिंसक और शोषणमुक्त समाज देखना चाहते थे।

ट्रस्टीशिप और सहकारिता आन्दोलन

जिस प्रकार कल्याणकारी राज्य के लिए मैंने कहा, उसी तरह यह बात सहकारिता आन्दोलन पर भी लागू होती है। मुट्ठी भर लोगों के स्वार्थ को संगठित करने का काम सहकारी समितियों ने इस देश में किया है।

जो सहकारी समितियाँ बुनकर, चमार, लुहार, आदि की बनीं उन्होंने जातिवाद को और मजबूत किया। समाज की यथास्थिति (स्टेटसको) को तोड़ने के बजाय उसे बनाये रखने में ये मदद रूप हुई हैं।

सहकारिता का नाम लेकर साम्राजवाद का नारा दिया जाता है, पर निष्ठाएँ वही पूँजीवादी रहती हैं। एक्शन में, उनके क्रिया-कलापों में समाजवादी मनोवृत्ति का दर्शन नहीं होता। आज सहकारी कामनवेल्थ की बात की जाती है, पर उसमें कोई दम नहीं, यह 'एण्टीरेवोल्यूशनरी' (प्रतिक्रान्तिकारी) कल्पना मात्र है।

ट्रस्टीशिप के कुछ अन्य पहलू

साधन आज बढ़ रहे हैं। टेक्नालोजी का विकास हो रहा है। गाँव-गाँव ट्रैक्टर, ट्यूबवेल तथा अन्य साधन पहुँच रहे हैं। ये व्यक्ति के हाथ में न होकर समुदाय के हाथ में हों। गाँव है तो ग्रामसभा ट्रैक्टर रखे।

जो औजार परिवार में हैं वे विकेन्द्रित रूप में परिवारों में ही रहे और बिजली की मदद से अगर कुछ शुरू होता है तो वह गाँव

को तरफ से चले तो समाज में समानता लाने में मदद होगी। गाँव के मानी पंचायत या कुछ गाँव मिलकर ब्लाक-स्तर पर पंचायत समिति के पास ऐसे साधन हैं।

जहाँ तक शेयरिंग (साझेदारी) का सवाल है, वह भी ट्रस्टीशिप की कल्पना में कुछ हद तक बैठता है। एक इंजीनियरिंग का कारखाना खुला है, उसने मजदूरों को ट्रेनिंग देने के बाद उन्हें चार-पाँच हजार की मशीनरी दे दी। कच्चा माल देकर उनसे यह फर्म पक्का माल लेती है और खुद उन पुर्जों को जोड़कर (assemble करके) मशीन तैयार करती है। ये विकेन्द्रित इकाइयाँ इस कम्पनी के शेयर होल्डर भी हैं। आज इन इकाइयों की पूँजी दस लाख के करीब है।

सेवाग्राम में ढाई लाख रुपये की पूँजी लगाकर बम्बई की एक फर्म ने ऐसा कारखाना खोलना चाहा। राजस्थान में देश के एक उद्योगपति ने सरकार से दस हजार एकड़ भूमि पर इस तरह का प्रयोग करना चाहा, जिसमें किसानों को वे खेत तैयार करके देने के दस साल बाद वह अपनी पूँजी लौटा लेनेवाले थे। उत्तर प्रदेश के इटावा जिले में लिवर ब्रदर्स ने गन्ने की खेती करनेवालों को गन्ने के उत्पादन के साथ-साथ मटर पैदा करने को प्रोत्साहित किया। ढाई लाख रुपये का बीज पहले अपनी ओर से वितरित किया और पहले साल में ही अपनी पूँजी निकाल ली। गाँववालों को रासायनिक खाद, बीज आदि की तथा पानी की सुविधा मिली, उनको गन्ने में भी लाभ हुआ और मटर-उत्पादन में भी।

देश के पूँजीवालों का लाभ इस तरह ग्रामीण विकास में मिलेगा तो निश्चित रूप से ट्रस्टीशिप के विचार को भी फूलने-फलने को इस देश में अवसर मिलेगा। शर्त यही है कि गाँववालों को प्रशिक्षित करते समय उनकी ट्रेनिंग में सामाजिक मूल्यों को दाखिल किया जाय। सामाजिक शिक्षा को बढ़ावा मिलना चाहिए।

आज देश में भिलाई कारखाने में विदेशी पूँजी के साथ भारतीय सरकार अपनी पूँजी लगाकर काम कर रही है। धीरे-धीरे रूसी इंजीनियरों की टीम कम होती जा रही है। दस साल बाद वे अपनी पूँजी भी वापिस ले लेंगे। इसी तरह भारतीय पूँजीपतियों को प्रेरित करना चाहिए, नहीं तो वे दो नम्बर के खाते बनाते रहेंगे और हम उनकी जाँच के लिए अधिकारी के ऊपर अधिकारी बढ़ाकर देश का खर्च ही और बढ़ायेंगे। दिल्ली से आगे सूरतगढ़ फार्म है, उसमें २ करोड़ रुपये सरकार ने लगाये हैं और पिछले दस सालों में १½% ब्याज भी उस धन का नहीं निकल पाया है।

ट्रस्टीशिप के विचार को आज के सन्दर्भ में समझने और समझकर व्यक्ति, संस्था और राज्यस्तर पर अमल में लाने की जरूरत है, फैक्टरियों की ओर ही देखते रहने से यह व्यवहार में आनेवाला नहीं है।

प्रस्तुतकर्ता : गुरुशरण

सत्ता, पूँजीपति और सरकार

[इस विषय पर 'भूदान-यज्ञ' के अंक ३० में ३६२वें पृष्ठ पर श्री सिद्धराज ढड्ढा का 'चिन्तन-प्रवाह' प्रकाशित हुआ है। उसी सन्दर्भ में श्री सुरेश राम भाई ने अपना चिन्तन पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत किया है। इस विषय पर पाठक अपना चिन्तन लिखें तो अच्छा रहे। —सं०]

भारत के आर्थिक नियोजन और सामुदायिक विकास की अजीब विडम्बना है कि जितना ही सरकार द्वारा समाजवाद का नारा ज्यादा बुलन्द किया जाता है उतनी ही यहाँ विषमता की खाई चौड़ी होती जाती है और बेकारी, गरीबी और मुखमरी के शिकार होनेवालों की तादाद भी बढ़ती जाती है! दुनिया में इस नमूने का 'मोनोपोलिस्टिक सोशलिज्म' (एकाधिकारवादी समाजवाद) शायद ही कहीं पनपता हो। क्या गजब है कि चोटी के ५ प्रतिशत श्रीमानों की आमदनी सन् १९५२–५३ में जहाँ देश की आबादी का १४·४ प्रतिशत थी वहाँ सन् १९६२–६३ में २४ प्रतिशत हो गयी और नीचे के २० प्रतिशत लोगों की आमदनी इसी मुद्दत में ७·५ प्रतिशत से गिरकर ६·४ पर उतर आयी।

दो रास्ते

स्पष्ट है कि पूँजी, साधन और सत्ता का केन्द्रीकरण हो रहा है और सारा देश लाचारी के साथ आर्थिक दासता के बन्धन में जकड़ता जा रहा है। सवाल यह है कि इन जंजीरों को कैसे तोड़ा जाय और आर्थिक आजादी कैसे हासिल हो। दो ही रास्ते हैं। एक तो यह कि सारी पूँजी, साधन और सत्ता, व्यक्ति से सरकार अपने हाथों में ले ले और फिर न्यायपूर्वक उसका विभाजन करे। दूसरा यह कि मालकियत न व्यक्ति के पास रहे, न सरकार के; बल्कि जनता अपने हाथों में ले ले और फिर उसका समत्वपूर्वक वितरण या विनियोग हो।

दुनिया में अबतक इन दो में से पहले रास्ते की मिसालें सामने आयी हैं। मार्क्स और लेनिन के कदमों पर चलकर रूस और चीन में पूँजीपतियों को निहत्था करके सारी सत्ता और साधन सरकार ने अपने हाथों में लेकर सबका हित करने और शोषण मिटाने की कोशिश की। सब जानते हैं कि इसमें पूरी कामयाबी भले न मिली हो, लेकिन जनता का दुःख पहले के मुकाबिले बहुत कम हो गया। उसे और भी कम करने और सच्चा साम्यवाद स्थापित करने का प्रयत्न वहाँ जारी है।

दूसरा रास्ता यानी सीधे जनता के हाथ में साधन पहुँचाने की कोशिश करनेवाला, इतिहास में अकेला भूदान-ग्रामदान का आन्दोलन है। पिछले अठारह बरसों में उसके अंदर की छिपी हुई अनेक सम्भावनाएँ प्रकट हुई हैं और अहिंसा के माध्यम से आर्थिक क्रान्ति की शक्यता में लोगों को विश्वास पैदा हुआ है। लेकिन अभी इस दिशा में बहुत कुछ करना बाकी है और तभी अहिंसा द्वारा शोषण-रहित और शासन-मुक्त समाज की स्थापना हो सकेगी।

पूँजीपति बनाम सरकार

लेकिन जबतक अहिंसा का यह पराक्रम सामने नहीं आता है तबतक क्या किया जाय? क्या पूँजीपतियों के हाथ में केन्द्री-

www.vinoba.in

करण होने दिया जाय ? और हम विकेन्द्रीकरण का राग अलापते रहें ? देश के सभी हितैषियों और सार्वजनिक कार्यकर्ताओं को, विशेषकर सर्वोदय-प्रेमियों और गांधी-परिवार को इस पर आज सोचना है। अपने "चिन्तन-प्रवाह" लेखमाला में गांधी-परिवार के वरिष्ठ सदस्य और सुप्रसिद्ध सर्वोदय-विचारक श्री सिद्धराज ढड्ढा ने हाल ही में कहा है कि "हम नहीं चाहते कि आर्थिक सत्ता टाटा, बिड़ला जैसे उद्योगपतियों के हाथ में केन्द्रित रहे, लेकिन हम यह भी नहीं चाहते कि वह सरकार के हाथ में केन्द्रित हो। हम चाहते हैं कि शक्ति सीधे जनता के हाथ में आये।" श्री सिद्धराज ने अपने लेख में संसद-सदस्य श्री चन्द्रशेखर द्वारा पूंजीपतियों और केन्द्रीकरण के खिलाफ उठायी आवाज का स्वागत करते हुए यह खेद प्रकट किया है कि चन्द्रशेखरजी को इससे ज्यादा मतलब नहीं कि आर्थिक सत्ता का विकेन्द्रीकरण हो और वह सचमुच लोगों के हाथ में आ जाय, बल्कि उन्हें इस बात की ज्यादा चिन्ता है कि वह सत्ता पूंजीपतियों की बजाय सरकार के जरिये लोगों के हाथों में आ जाय।"

राष्ट्रीयकरण की मांग

श्री सिद्धराजजी ने जो मन्तव्य प्रस्तुत किया है, उसकी सचाई से कोई इनकार नहीं कर सकता। उनके कथन से हम पूरी तरह सहमत हैं। लेकिन उनके वक्तव्य से कुल मिलाकर यह झलक निकलती है कि आर्थिक क्षेत्र में राष्ट्रीयकरण की जो प्रवृत्ति फैल रही है उसे वे पसन्द नहीं करते। सिद्धराजजी को जो जानता है वह स्वप्न में भी यह नहीं सोच सकता कि वे पूंजीपतियों का पक्ष करेंगे या उनके हाथ में सत्ता का केन्द्रीयकरण चाहेंगे। लेकिन सवाल वही है जो हमने ऊपर उठाया है, वह यह कि जबतक जनता के हाथों में सत्ता न आ जाये तबतक क्या हो ? हमारा स्पष्ट मत है कि राष्ट्रीयकरण का रास्ता ही, जिसकी मांग श्री चन्द्रशेखर कर रहे हैं, बहुत सही और मुनासिब है। हम जानते हैं कि राष्ट्रीयकरण में भी शोषण की प्रक्रिया जारी रहती है। लेकिन व्यक्तिगत पूंजीवाद से तो राष्ट्रीयकरण लाख दर्जे बेहतर है। गत १० मई को प्रधानमंत्री ने अपने भाषण में कहा है कि "सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों में बहुत सुधार की गुंजाइश है और उसके जो दोष सामने आये हैं उनका निराकरण होना चाहिए।" हम स्वीकार करते हैं कि दोष-मुक्त अवस्था में भी राष्ट्रीयकरण द्वारा जनता का शोषण जारी रहेगा। लेकिन उसका कुछ कल्याण भी जरूर होगा, जो कि पूंजीवाद में असम्भव है। इसलिए पूंजीवाद और राष्ट्रीयकरण में से हमको कोई एक चीज पसन्द करनी हो तो निःसंकोच भाव से हम राष्ट्रीयकरण का समर्थन करेंगे और इस दृष्टि से भाई चन्द्रशेखरजी ने जो मांग की है उसके औचित्य और आवश्यकता के बारे में जितना कहा जाय, थोड़ा है। जिस साहस और निष्ठा से चन्द्रशेखरजी ने यह कदम उठाया है उस कदम पर हम उनका अभिनन्दन करते हैं।

हम सर्वोदयवालों को एक बात नहीं भूलनी चाहिए। वह यह कि हमारी अपनी सीमाएँ हैं। पिछले अठारह बरस में भूमि के समवितरण की दिशा में तो हम कुछ काम कर सके हैं, लेकिन उद्योग के दायरे में हम सफल साबित नहीं हुए। हमने लाखों भूमिवालों से दान लिया है और अनेक ने अपनी भूमि के स्वामित्व का विसर्जन भी किया है। लेकिन हम किसी एक भी पूंजीपति या उद्योगपति को नहीं समझा सके और ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त को अमली रूप देने के लिए नहीं मना पाये। श्रीमानों से हमको सम्पत्तिदान या आर्थिक सहायता भी ज्यादा नहीं मिल पा रही है। उनका रुख हमारे प्रति तिरस्कार का नहीं तो उदासीनता का जरूर है। उनकी दृष्टि में हम निपट अव्यावहारिक या कोरे आदर्शवादी हैं। न हम गरीब जनता या दरिद्रनारायण से समरूप हो सके हैं और न पूंजीपतियों को हिला पाये हैं। इस बीच उनका धंधा जारी है और जोरों से शोषण बढ़ रहा है और विषमता फैल रही है। बड़े उद्योगों, बैंकों, आयात-निर्यात आदि के राष्ट्रीयकरण से पूंजीपतियों की शोषण-शक्ति निःसन्देह घटेगी और जनता का भी बहुत कुछ त्राण होगा। इसलिए बुद्धिमानी की मांग है कि राष्ट्रीयकरण जितनी जल्दी हो सके, किया जाय।

तो, क्या पूंजीवाद से हम सीधे उस मंजिल पर पहुंच जायेंगे या पहले राष्ट्रीयकरण हो और फिर हम उस तरफ चलें। आज की परिस्थिति में ऐसा लग रहा है कि पूंजीपति ट्रस्टीशिप के लिए तैयार नहीं हैं और राष्ट्रीयकरण की सीढ़ी से ही आगे बढ़ना होगा। लेकिन उसमें कुछ देर लग सकती है, इसलिए हम यही चाहेंगे कि भारत के उद्योगपतियों को भगवान सुबुद्धि दे और वे ट्रस्टीशिप के लिए स्वयं आगे आकर स्वामित्व-विसर्जन करें।

सर्वोदय का गणित

आज जो अर्थशास्त्र दुनिया में चलता है उसमें पूंजीवाद का मतलब है 'प्राइवेट सेक्टर' और राष्ट्रीयकरण के मानी है 'पब्लिक सेक्टर'। अगर समाजवाद सौ प्रतिशत 'पब्लिक सेक्टर' लाना चाहता है तो पूंजीवाद 'प्राइवेट सेक्टर' पर लट्टू है। दोनों में ही केन्द्रीयकरण है और जनता का शोषण है। लेकिन दोनों ही जनकल्याण का दावा करते हैं—एक सामूहिक स्वामित्व द्वारा और दूसरा व्यक्तिगत अभिक्रम द्वारा। इन दोनों का गणित एक-सा है : १०० + ० = १००।

लेकिन सर्वोदय-विचार का गणित निराला है : १०० + १०० = १००।

यह सूत्र हमें 'ईशावास्य उपनिषद्' से मिला है, लेकिन अर्वाचीन युग के लिए खरा उतरता है। दूसरे शब्दों में प्राइवेट और पब्लिक सेक्टर अलग-अलग और एक-दूसरे के वैरी न रहकर एक-दूसरे में ओत-प्रोत हो जायें। उनमें वही नाता होना चाहिए जो उँगलियों और हथेली में होता है। न हथेली काट देने से काम बनेगा और न उँगलियाँ उड़ा देने से। जब पब्लिक सेक्टर रूपी हथेली और प्राइवेट सेक्टर रूपी उँगलियाँ, दोनों अपना आपा भूलकर एक-दूसरे से समरस हो जायेंगे, तभी मुट्ठी बँधेगी और आर्थिक गतिविधि का हाथ देश रूपी शरीर के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकेगा।

भूदान-ग्रामदान आन्दोलन से हम जमीन के मसले को उठाकर यही नक्शा लाना चाहते हैं। लेकिन औद्योगिक क्षेत्र में जबतक हम अपने लक्ष्य पर नहीं पहुंचते हैं तबतक पूंजीवाद के मुकाबिले राष्ट्रीयकरण को अवश्य ही और सहर्ष प्राथमिकता देंगे। —सुरेश राम

www.vinoba.in

• आध्यात्मिक साम्यवाद
• आन्दोलन के त्रिदोष
• सुखी कौन, दुखी कौन ?

अब सब जान गये हैं कि यह काम होकर ही रहेगा। अब भले कोई उसे चार-एक दिन आगे ढकेलने का प्रयत्न करे, लेकिन बिहार प्रान्तदान हुए बिना नहीं रहेगा। और इसलिए इस महायज्ञ में अपनी ओर से भी कुछ आहुति डालने के लिए सभी उत्सुक हैं। हजारीबाग में इसका दर्शन हुआ। ३० अप्रैल की रात को बाबा ने पटना छोड़ा, बीच में ४ दिन संथाल परगना में बिताकर ५ तारीख को हजारीबाग जिले में प्रवेश किया। तीन दिन हजारीबाग शहर में निवास था। एक दिन जिलेभर के प्रखण्ड-पदाधिकारी, शिक्षा-पदाधिकारी आदि लोग इकट्ठे हुए थे। सबने मिलकर तय किया कि ३१ मई तक हजारीबाग जिला पूरा दान में आ जाना चाहिए। शिक्षकों की पूरी ताकत उसमें लगे, यह भी तय हुआ। तब सवाल आया कि मई में ही स्कूलों की छुट्टियाँ शुरू होती हैं। छुट्टियाँ शुरू होते ही शिक्षक अपने-अपने घर चले जायेंगे। तो क्या किया जाय ? शिक्षा-पदाधिकारी ने जाहिर किया कि स्कूलों की छुट्टियाँ जून के आरम्भ में शुरू होंगी और सारे शिक्षक मई अन्त तक इस काम में लगेंगे। कमिश्नर और सरकारी अधिकारी भी सहयोग के लिए तैयार थे। अब हजारीबाग में काम जोरों में शुरू हो गया है।

× × ×

१० मई की शाम को चार बजे बाबा राँची पहुँचे। हलकी-हलकी बारिश हो रही थी। प्रथम चार दिवस के लिए निवास की व्यवस्था सर्किट हाऊस में थी। राँची जिले में सर्वोदय के कार्यकर्ता नहींवत् हैं। श्री वैद्यनाथ बाबू अपना दफ्तर बाबा के यहाँ पहुँचने के कुछ दिन पहले ही राँची लाये हैं। कैलाशबाबू भी उनके साथ हैं। स्वागत में एक छोटी-सी सभा हुई। उसे सम्बोधित करते हुए बाबा ने कहा—'बहुतों को बहुत कठिनाई मालूम होती है कि राँची जिलादान कौन करेगा ? कैसे बनेगा ? हम नहीं जानते कि कैसे बनेगा, लेकिन बनेगा इतनी पक्की बात है। कौन करेगा ? उसका हमारे मन में एक ही उत्तर है—भगवान।''''राँची जिला तो यों ही दान में आ जायेगा। क्योंकि यहाँ के लोगों (आदिवासी) की परम्परा में ही 'स्पिरिचुअल कम्यूनिज्म' (आध्यात्मिक साम्यवाद) है। 'कम्यूनिज्म' शब्द बाइबिल से आया है। ये कम्यूनिस्ट तो तोताराम हैं। बाइबिल का ही शब्द उन्होंने उठा लिया है। जीसस क्राईस्ट के शिष्यों ने साम्ययोगी समाज बनाया था। वही शब्द कम्यूनिस्टों ने उठा लिया। यह जो साम्ययोगी समाज है, वह आदिवासियों की परम्परा में है। वे जमीन पर व्यक्तिगत मिलकियत नहीं मानते। इसलिए ग्रामदान का काम यहाँ आसान होना चाहिए।

सर्व सेवा संघ के नये अध्यक्ष श्री जगन्नाथनजी तथा मंत्री श्री ठाकुरदास बंग बाबा से मिलने आये थे। नये काम का भार सँभालने की तैयारी में हुए चिंतन की रूपरेखा बंगसाहब ने बाबा के सामने रखी। हमारे काम की गति बढ़ाने में तीन प्रकार की रुकावटें दिखाई दे रही हैं—१. वातावरण का अभाव, २. कार्यकर्ताओं का अभाव, ३. पैसे का अभाव। इन तीन समस्याओं का परिहार किस तरह से हो सकता है, इसकी योजना की रूपरेखा भी उन्होंने सामने रखी। बाबा से कहा—'अभी जो त्रिदोष बताये गये, उनमें दो गुण हैं और एक दोष है। कार्यकर्ताओं की कमी और शिक्षित लोग कार्यक्रम में नहीं, यह दोष है। पैसे का अभाव बहुत बड़ा गुण है। और परिस्थिति विरोधी है, वह तो अत्यन्त अनुकूलता माननी चाहिए। अंधकार जितना गहरा होता है, उतना टार्च के लिए अनुकूल होता है। इसलिए परिस्थिति जितनी विरोधी होगी, उतनी आपके लिए अनुकूलता माननी चाहिए। पैसे का अभाव यह भी गुण है। ध्यान में आना चाहिए कि हमारे पास इतना पैसा है कि किसी एक घर में रह नहीं सकता। हर घर में वह पड़ा है।"

एक बार सर्व सेवा संघ के हरिहरन भाई से चर्चा करते हुए कहा—"शांति-सेना में आयु-मर्यादा नहीं होनी चाहिए। अगर आयु-मर्यादा रखते हैं, तो शांति-सेना शरीर-प्रधान हुई। कोई ऐसा हो सकता है कि उसके केवल हाजिर रहने से ही शांति हो सकती है। यह अलग बात है कि शारीरिक काम करना हो, तो शक्ति चाहिए। पर अहिंसा की खूबी यह है कि इन ताकतों का उपयोग अहिंसा में होता है। 'सरवाइवल आफ दी अनफिटेस्ट इन नानव्हायलन्स'। (अहिंसा में अंत्य का भी अस्तित्व रह सकेगा।) इसलिए जो ताकतें लड़ाई में काम नहीं कर सकतीं वे अहिंसा में काम करेंगी। इस तरह कुल ताकतों का इस्तेमाल अहिंसा करती है। हिंसा में सब ताकतें काम नहीं कर सकतीं और इसलिए हिंसा से जो शक्ति पैदा होती है, वह खास लोगों के हाथ में ही आती है।"

× × ×

ऐसे तो आजकल बाबा के पास खास कार्यक्रम रहता नहीं। सुबह ४ बजे ही बाबा उठ जाते हैं। सुबह का सारा समय प्रातः अध्ययन-अध्यापन में जाता है। १०-३० बजे से खुला दरबार लगता है। १२ बजे तक आवश्यकतानुसार सभा-चर्चाएँ होती हैं। कभी दर्शनार्थियों से बातें होती हैं। छोटा नागपुर कमिश्नरी के ईसाई बिशप बाबा से मिलने आये थे। उनका मुख्य कहना यह था कि—"हमें कोई आदर्श ग्रामदानी गाँव, जहाँ आगे का काम शुरू हो गया हो, देखने को मिलेगा, तो हम आदिवासी लोगों को समझा सकेंगे।" बाबा ने उनसे कहा—"भारत में आप लोगों के संगठन पर हमारा विश्वास है। आप अपने क्षेत्र में ग्रामदान करवा कर नमूना तैयार करिएगा। एक आदर्श बनाने के लिए कितना समय लगेगा ?" बिशप साहब ने कहा—"कह नहीं सकते।" बाबा ने कहा—"आपका संगठन अच्छा संग-

ठन है। आपके पास पैसा भी है। फिर भी आप निश्चित तरह से कह नहीं सकते कि एक आदर्श गाँव बनाने में कितना समय लगेगा। आदर्श गाँव तो गाँववाले ही बनायेंगे। इसलिए आदर्श गाँव बनाने की बात यानी आन्दोलन टालने की बात है। आदर्श गाँव बनाने से क्रान्ति नहीं होती। अंग्रेज सरकार अगर कहती कि आप स्वराज्य माँग रहे हैं, पहले एक जिला आदर्श करके बताओ, फिर स्वराज्य मिलेगा, तो आप लोग मानते? लोकमान्य तिलक ने कहा था—"स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। और, स्वराज्य-प्राप्ति के बाद हम लोग सुखी होंगे, ऐसा जो कहता होगा, वह भ्रम में है। स्वराज्य के बाद मुसीबतें आयेंगी, लेकिन हम अपनी बुद्धि का विकास करना चाहते हैं। पारतंत्र्य में बुद्धि अविकसित रहती है। इसलिए बुद्धि-विकास के लिए स्वराज्य चाहिए। आजादी का नाम है बुद्धि की आजादी।" बिशप साहब ने पूछा—"लेकिन गरीबों में दुःख-निवारण के लिए कुछ करना होगा।" बाबा ने कहा—"यह खूब समझना चाहिए कि ईसा मसीह ने कहा है कि – 'दी पुअर यू हैव आलवेज विथ यू।' गरीब तुम्हारे बीच में हमेशा रहेंगे। कम्यूनिस्ट पूछता है, आपको गरीब कायम रखने हैं क्या? 'फार युवर पटूनाइजिंग एटिट्यूड?' क्योंकि आप गरीबी को कायम रखनेवाले दृष्टिकोण को संरक्षण दे रहे हैं। आपकी सेवा करने के लिए, और स्वर्ग पाने के लिए, क्या आप गरीबी कायम रखना चाहते हैं? इसका सीधा उत्तर आपको देना होगा। नक्सालबाड़ी में आदिवासी ही थे, बाण लेकर खड़े हो गये। खूनी क्रान्ति आ रही है जोरों से। आप लोग आँखें बंद किये हुए हैं, बाबा आँख खुली रखकर देखता है। दुःखी को सुखी बनाने की बात क्या करें, दुनिया में कोई सुखी है नहीं। क्या अमरीका, इंग्लैंड में लोग सुखी हैं? पैसा बढ़ा यानी सुख नहीं बढ़ा। हम लोगों को सुखी बनाने का दावा नहीं कर रहे हैं। हम उनको आत्मनिष्ठ बनाना चाहते हैं। जिसके पास जो है वह सबको बाँटेगा। गरीबी हो, तो गरीबी बाँटेगा, विपुलता हो, तो विपुलता बाँटेगा। गाँवों में आध्यात्मिक वृत्ति बढ़े, बाँटने की वृत्ति बढ़े, यही इच्छा है।"

रांची जिले के प्रतिष्ठित लोगों की ओर से, जिनमें सरकारी अधिकारी भी होंगे, जिलादान के काम के लिए अपील निकालने का तय हुआ है। उपस्थित बिशपों ने व्यक्तिगत तौर पर अपने हस्ताक्षर भी उसमें शामिल कर दिये हैं।

× × ×

इन्दौर से श्री जसवंतराय भाई आये थे। आप इन्दौर में साहित्य-प्रचार का काम बहुत लगन से कर रहे हैं। बहुत दिनों के बाद बाबा से मिल रहे थे। बातें चल रही थीं। बाबा ने भाईजी से उनकी उम्र पूछी। उन्होंने ५५ वर्ष बतायी। बाबा ने कहा—"वैदिक धर्म में प्रार्थना है—'जिजीविषेत् शतं समाः'...'पश्येम शरदः शतम्।' लेकिन आज का दिन आखिरी है समझकर व्यवहार करना चाहिए। हमने नियम किया था कभी किसीसे कर्जा लेना नहीं और देना नहीं। देना है तो दान देना और लेना है तो दान लेना। देनेवाला भी मुक्त और लेनेवाला भी मुक्त। आज का काम आज पूरा करके सोयेंगे। आज का दिन आखिरी समझकर काम पूरा करेंगे। भगवान ने बुलाया, तो यह नहीं कहेंगे कि अभी थोड़ा काम बचा है।"

फिर भाईजी से पूछा कि नींद कितनी लेते हो? भाईजी ने बताया कि नींद इतनी सहजता से नहीं आती। तब कहने लगे—"हम हमेशा मनुष्य को पहचानने के लिए पूछते हैं कि नींद कितनी लेते हो? एक बार एक राजनैतिक नेता हमसे मिलने आये, तब उनसे हमने यही पूछा, तो बोले—'लेता हूँ, लेकिन पाता नहीं।' यह हालत है। कुल दुनिया का बोझ मेरे सिर पर है, यह जो मान लेता है, उसकी गति क्या होगी? एक दफा मैं ट्रेन से जा रहा था। डिब्बा खाली पड़ा था। तो मैंने टहलना शुरू कर दिया। तो दूसरा आदमी बैठा था, उसने पूछा टहलते क्यों हो, तो मैंने जवाब दिया कि इसलिए कि जरा जल्दी पहुँच जाऊँगा। आपके टहलने से ट्रेन की गति में फरक पड़ता नहीं। गति है ट्रेन की। फिर आपको स्वतंत्र व्यायाम करना है, तो जरूर करें। वैसे बोझ उठानेवाला वह है ऊपर। आपको चिंता करनी है, तो करें। गाढ़ निद्रा आनी चाहिए। निद्रा समाधि स्थिति।" जसवन्त रायजी ने पूछा—"समाधि और निद्रा में क्या फरक है?" बाबा ने कहा—"यह एक सवाल है। अगर निद्रा में आत्मा परमात्मा में लीन होती है, तो वापस कैसे आती है? तो शंकराचार्य ने उसके लिए मिसाल दी है। गंगा के पानी से भरा हुआ लोटा सीलबंद कर के गंगा में डाल दिया और बाहर निकाल लिया, तो जैसे के वैसे निकला। आत्मा पर अहंरूपी सील लगी है। वह सील टूट जायेगी, तो परमात्मा के साथ एकरूप हो जायेंगे। सील किया हुआ लोटा बाहर रखेंगे, तो धूप से गरम होगा। गंगा में डालेंगे, तो उसके साथ एकरूप नहीं होगा, लेकिन ठंढा तो होगा।"

× × ×

बाबा का निवास फिलहाल रांची में रहेगा। बीच में ता० ६ से १० जून तक धनबाद और पुरूलिया जायेंगे। धनबाद में जिलादान-समर्पण समारोह होगा। १० जून को वापिस रांची जायेंगे। यहाँ बाबा का निवास उत्तर कांके रोड पर के एक मकान में है। स्व० अनुग्रहनारायण सिंह जब मंत्री थे, तब यहीं रहते थे। बाबा का स्वास्थ्य अच्छा है।

विनोबा-निवास, —कालिन्दी
रांची (बिहार)

'भूदान-यज्ञ' के ग्राहक बनाने का व्यापक अभियान चलायें

सर्व सेवा संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बंग की कार्यकर्ता साथियों से अपील

वाराणसी: सर्व सेवा संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बंग ने सर्वोदय आन्दोलन को गतिवान्, प्राणवान् और ठोस बनाने के लिए कार्यकर्ता साथियों और मित्रों से अपील की है कि विचार-शिक्षण और उसकी स्थापना के लिए अहिंसक क्रान्ति के संदेशवाहक मुखपत्र 'भूदान-यज्ञ' के ग्राहक बनाने का व्यापक और सघन अभियान चलायें। इस दृष्टि से 'भूदान-यज्ञ' के ग्राहक बनाने पर प्रति ग्राहक एक रुपया विशेष कमीशन देना भी तय हुआ है।•

www.vinoba.in

ग्रामदान-कानून अविश्वास पर आधारित न हो

बिहार की २०० लाख एकड़ जोत की जमीन में से आज की शर्त के अनुसार बिहार-दान होने तक भूमिहीन के लिए मिलनेवाली जमीन का आसानी से गणित हो सकता है। करीब १५ प्रतिशत आबादी के गाँव प्रखण्ड-दान में छूट जाते हैं। फिर लाचिरागी मौजा तथा शहरी क्षेत्र का जोत का रकबा, सब मिलाकर कम-से कम २०-२५ प्रतिशत जमीन तो एकदम अलग छूट जाती है। शेष १५० लाख एकड़ में से यदि एक-एक इंच का 'बीघा-कट्ठा' निकल जाय तो अधिक-से-अधिक १ लाख ५० हजार एकड़ जमीन इस समुद्र-मंथन में से प्राप्त होने की सम्भावना है, जब कि भूदान की बची जमीन में से अबतक करीब १ लाख एकड़ जमीन बँट चुकी है।

व्यावहारिकता का विश्लेषण

हमने अबतक ऊपरी गणित सामने रखा। अब थोड़ा और समीप आकर इसकी व्यावहारिकता का विश्लेषण करें। ग्रामदान की शर्त में मोटे तौर पर हस्ताक्षरकर्ता द्वारा यह कहा जाता है कि मैं अपनी कुल जमीन की मालिकी ग्राम-सभा को इस शर्त पर समर्पित करता हूँ कि इसमें भूमिहीनों के लिए बीघा-कट्ठा निकालकर शेष जमीन पर मेरा तथा मेरे आद-औलाद का जोत का हक कायम रहेगा। अब कानून चाहेगा कि जितनी जमीन घोषक के पास है उसका बीसवाँ हिस्सा स्पष्ट होना चाहिए। फिर इस बीसवें हिस्से का खाता, खसरा देकर घोषणापत्र पर घोषक की कुल जमीन का विवरण देना होगा, अन्यथा कानून की निगाह में हस्तांतरण होगा ही नहीं।

जहाँ थोड़ा भी ग्रामदान-पुष्टि का काम हुआ है, वहाँ इस शर्त की दुरूहता एवं अव्यावहारिकता का स्पष्ट दर्शन हुआ है। बिहार जैसे दमामी बन्दोबस्त के प्रान्त में कोई भूमि-अभिलेख पूर्ण नहीं है। इस स्थिति में घोषणापत्र पर भूमि का विवरण देना कठिन होता है और विवरण उपलब्ध कर दिया भी जाय तो विवरण छूट जाने का या 'अ' के नाम की जमीन 'ब' के नाम दाखिल हो जाने की सम्भावना रहती है। अब रहा बीघा-कट्ठा की जमीन का अलग से विवरण देने का प्रश्न। यदि इसे दाता से प्राप्त करते हैं तो पता नहीं रहता कि दाता किस प्रकार की भूमि का विवरण दे रहा है। चूँकि सर-जमीन तो देखी नहीं जाती और यदि दाता से विवरण पाने के विलम्ब के कारण कार्य-कर्ता स्वयं अपनी ओर से लिख देता है, जैसा कि आज बहुत करके हो रहा है, तो क्या पता कि दाता की झोपड़ी ही बीघे-कट्ठे में चली जाय!

हमने सिद्धान्त में माना है—भूमि की मालकियत का विसर्जन और कृषक-मजदूर की भूमिहीनता-निवारण। यह निर्भर करता है गाँव के दिल जुड़कर एक और नेक होने पर। कोई व्यक्ति मात्र दो शर्तें मानकर ग्रामदान में शरीक होता है—मालकियत का विसर्जन, एवं ग्राम-सभा के सर्वसम्मत निर्णय का समादर, तो इसमें से छूट क्या जाता है? कार्यक्रम के रूप में घोषणा में ग्राम-कोष एवं भूमिहीनता-निवारण जोड़ दें। लेकिन चाली-सवाँ हिस्सा का क्या प्रयोजन?

ग्रामदान की सरल घोषणा का नमूना

उपरोक्त तथ्य मानने के बाद हमारी घोषणा एकदम सरल हो जाती है—"मैं अपनी भूमि की मालकियत ग्रामसभा को इस शर्त पर समर्पित करता हूँ कि इसके जोत का अधिकार मुझे और मेरी सन्तान को हमेशा रहेगा। इसके साथ ही मैं संकल्प करता हूँ कि गाँव की सामूहिक पूँजी के लिए हमारे द्वारा ग्रामसभा में लिये गये निर्णय के अनुसार अपनी उपज या अन्य आय का एक हिस्सा ग्राम-कोष में जमा करूँगा तथा हमारे गाँव के श्रमिक-मजदूर का गाँव से स्थायी सम्बन्ध हो, इस हेतु उनकी भूमिहीनता दूर करने का हमारा प्रयत्न होगा।"

अब इस प्रकार की घोषणा में कुछ छूटता भी नहीं और न नाहक कुछ लदता है। गाँव में पारस्परिक विश्वास नहीं है तो मुठिया से ग्रामकोष प्रारम्भ होगा और विश्वास होगा तो अपना बड़ा हिस्सा देकर गाँव का बैंक ही खड़ा हो जायेगा। उसी प्रकार बीघा-कट्ठा की अव्यावहारिकता भी दूर हो जाती है।

आज की स्थिति में 'अ' गरीब है, पर उसकी जमीन उसी राजस्व गाँव में है तो उसके पाँच बीघे में से पाँच कट्ठा तो निकल जायगा। लेकिन दूसरी ओर 'ब' धनी आदमी है, उसकी जमीन उस राजस्व गाँव में नहीं है तो उनसे कुछ नहीं मिलेगा। बहुत-से ऐसे उदाहरण हैं कि जमीन पड़ोसी लाचिरागी गाँव या अन्य गाँव में है जहाँ अपने गाँव जैसा ही आना-जाना है। हमारी प्रस्तावित शर्त में यदि 'अ' अपनी ५ बीघे जमीन में से ५ कट्ठा दिल से निकालता है तो 'ब' अपने ५० बीघे में ५० कट्ठा निकालेगा। वह कानून की नजर में छूट जाने पर फिर आसानी से पकड़ में नहीं आयेगा, पर ग्राम-सभा के सौहार्द्रपूर्ण वातावरण में प्रस्तावित कानून उसका बाधक नहीं होगा।

उसी प्रकार गाँव की जोत की जमीन के ५१ प्रतिशत की नाहक शर्त भी अलग करने योग्य है। जरा अपनी निगाहें उठाकर देखें। पूरे आन्दोलन में कितने गाँव की भूमि का ५१ प्रतिशत का हिसाब ठीक-ठीक मिलाकर घोषणा की गयी? क्या ऐसा नहीं होता कि जहाँ बड़े भूमिवान आज इस विचार को मानने में हिचक रहे हैं वहाँ मात्र भूमिहीन का रामपुर-मुसहरी तथा रामपुर हरिजन टोला, आदि नाम से ग्रामदान करवाकर अस्वाभाविक गाँव भी इस आन्दोलन में लाये जाने लगे हैं। जब हमने सिद्धात में यह मान लिया कि जो ग्रामदान में शरीक नहीं होते उन्हें भी ग्रामसभा की सदस्यता प्राप्त होगी, तो ५१ प्रतिशत तथा ४० प्रतिशत में क्या फर्क आता है, यह समझ में नहीं आता। और जब मात्र भूमिहीन का अलग ग्रामदान करवा ही लेते तो उससे तो यही अच्छा है कि उन्हें समीप आने का ही मौका दीजिए। यहाँ भी यदि ७५ प्रतिशत की शर्त कम मालूम हो तो और भी ५ जोड़ लें, यानी ८० प्रतिशत जन-संख्या के परिवारों की ओर से ग्रामदान की घोषणा हो जाय तो ग्रामदान पूरा हो जायेगा। ऐसा मानें।

आज सरकारी अधिकारी एवं हमारे आन्दोलन के कुछ कानूनदाँ लोगों के बीच

बड़ी खींचातानी चल रही है। हमारी तरफ से यह कहा जाता है कि अन्दाज से ५१ प्रतिशत मान लेने पर ग्रामदान घोषित किया जाय। सरकारी अधिकारी कहते हैं कि गाँव के भूमिवानों को पूरी जमीन का रकबा तथा ग्रामदान के शरीक जमीन का रकबा जब तक मालूम नहीं होता तबतक यह ५१ प्रतिशत आयेगा कहाँ से? राजस्व अभिलेख में राजस्व गाँव की कुल जमीन का रकबा तो मिलेगा, पर उसमें से उस गाँववाले की कितनी जमीन है, यह पता लगाना थोड़ा कठिन है और उससे भी कठिन है पाही और देही काश्तकार की व्याख्या करना। यानी एक तरफ हम नाहक शर्तें लगाते हैं और दूसरी ओर उससे छूटना भी चाहते हैं।

ग्रामदान-घोषणा का नया तरीका

यदि बीघा-कट्ठा और ५१ प्रतिशत भूमि की शर्त निकालकर कानून बनता है तो ग्रामदान की सरकारी घोषणा का काम सहज और सुकर हो जायगा। गाँव में ढोल देकर एक जगह यह सूचना लगा दी जायगी कि अमुक-अमुक व्यक्ति ने अपने आश्रित परिवार की ओर से निम्नलिखित शर्तों के अनुसार ग्रामदान में शरीक होने की घोषणा की है। ३० दिन के अन्दर कोई आपत्ति नहीं आयी तो पंचायत की परिवार पुस्तिका या सेन्सस रिपोर्ट उलटकर देखा। जनसंख्या मिलायी। ८० प्रतिशत हस्ताक्षर पूरे हुए कि ग्रामदान घोषित।

इस सरकारी और वैधानिक घोषणा के साथ यदि वहाँ वातावरण भी बना है तो ग्रामदान-विचार पल्लवित होने लग जायेगा। यदि वातावरण नहीं बना है तो घोषणा वातावरण की प्रतीक्षा में पड़ा रहेगा, पर यह वहाँ के किसी काम में रुकावट नहीं बनेगा। यह नहीं होगा कि 'अ' की जमीन 'ब' के नाम हो गयी।

इतने लम्बे अनुभव के बाद अब आन्दोलन में लगे एक-एक मित्र पुष्टि की कठिनाई से पूर्ण परिचित हो गये हैं। ऐसे सभी साथियों को हमारा निवेदन मानो उनकी ही बात है, ऐसा लगेगा।

मेरा अनुरोध है कि सब लोग अपने पूर्वाग्रह से ऊपर उठकर इस नयी प्रस्तावना पर गंभीरता से विचार करें और लगता हो कि कहीं सिद्धान्त का गला नहीं घुट रहा है तो इसे एक स्वर से स्वीकार करें। फिर कानून के निष्णात लोग इसे भाषा प्रदान कर सरकार से वर्तमान अधिनियम में बदल करने का प्रस्ताव दें। मुझे लगता है कि सरकारी अधिकारियों को भी इसे मानने में कठिनाई नहीं होगी।

यदि आन्दोलन के मित्रों को मेरी बात जँचे तथा सरकार से इस अनुसार कानून में जल्दी परिवर्तन करवा लिया जाय तो मेरे अनुमान से बिहारदान की पुष्टि के लिए अधिक-से-अधिक तीन माह का समय चाहिए।

—निर्मलचन्द्र,
मंत्री, बिहार भूदान-यज्ञ कमिटी, पटना

"अणुव्रत" (पाक्षिक) : अहिंसा विशेषांक

संपादक : हर्षचन्द्र, रिषभदास रांका, प्रकाशक : अ० भा० अणुव्रत समिति, छतरपुर रोड, महरौली, नयी दिल्ली—३०। पृष्ठ : २६६, वार्षिक मूल्य : दस रुपये।

आज विश्वशांति एक समस्या बनी हुई है। गांधी-शताब्दी के इस वर्ष में बहुत अधिक लोगों को यह मालूम भी नहीं है कि गांधी जीवित हैं या मर गये हैं तथा गांधी ने सत्य और अहिंसा नाम की कोई देन दुनिया को दी है। लोगों को गांधी की जानकारी हो या न हो, लेकिन गांधी को लोगों की चिन्ता थी। चिन्ता ही सिर्फ नहीं थी, उन्होंने हिंसा और असत्य से छुटकारा दिलाने की कोशिश भी की थी। उनकी कोशिश उनके जीवन-काल में कोई परिणाम नहीं ला सकी, यह अलग बात है।

शताब्दी के इस वर्ष में दुनिया भारत में गांधी को देखना चाहती है। और यह भी देखना चाहती है कि हिंसा और अहिंसा की वर्तमान असमंजस भरी मंजिल में भारत का क्या रोल होगा? इस बात से शायद किसीको इनकार नहीं है कि आज जनजीवन में जिस तीव्रता से हिंसा प्रवेश कर रही है, अगर यही गति और परिस्थिति बनी रही तो गौतम, गांधी, बुद्ध, विनोबा के इस देश को रसातल में जाने से कोई बचा नहीं सकेगा।

गांधीजी को दूसरे देशवाले भी उनकी मानवीय हित की दृष्टि से उपयोगी शिक्षाओं के कारण सही अर्थों में अपना रहे हैं। इसका सबसे ताजा और प्रेरक उदाहरण चेकोस्लोवाकिया है। भारत के स्वयंभू गांधीवादियों ने अपने राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति के लिए अहिंसा का नाम अवश्य लिया, लेकिन उससे अहिंसा बदनाम हुई है। यही कारण है कि गांधी के देश में गांधी कहीं दिखाई ही नहीं देता! विनोबाजी बराबर कहते हैं कि अहिंसक क्रान्ति का गंगाजल लेकर पड़ोसी देशों में जाना चाहिए क्योंकि दुनिया को गांधी की अहिंसक क्रान्ति की तीव्र आवश्यकता है।

महावीर-जयन्ती के अवसर पर नैतिक जागरण का संदेश देनेवाली अणुव्रत समिति द्वारा गांधी-शताब्दी के उपलक्ष्य में "अहिंसा विशेषांक" प्रकाशित हुआ है, इसके लिए संपादकद्वय धन्यवाद के पात्र हैं। जैन मतावलम्बी लेखकों ने अहिंसा को एक ही कोण से प्रस्तुत किया है। यदि विवेचन में समग्रता का भाव रहता तो विशेषांक की उपयोगिता और बढ़ जाती।

भारत की संत-परम्परा में महावीर का एक उच्च स्थान है। उन्होंने अपने जीवन द्वारा अहिंसा का मार्ग प्रशस्त किया है। उनके पहले भी अहिंसा का प्रसार अन्य देशों में किया गया था। आज तो पहले से कहीं ज्यादा अहिंसा धर्म की जड़ें गहराई में जा सकती हैं, लेकिन क्या अणुव्रत समिति इस पुनीत कार्य के लिए कुछ प्रयास करेगी?

इस "अहिंसा विशेषांक" में देश के जाने-माने सुपरिचित गांधी-भक्तों एवं अहिंसा-अनुयायियों के लेख संकलित हैं। पूरे पृष्ठों के ८४ विज्ञापन देखकर पाठकों को यह भ्रम नहीं होना चाहिए कि विज्ञापनों के लिए ही विशेषांक निकाला गया है। यदि लेखों का क्रम रखने में थोड़ी सावधानी बरती गयी होती तो पूरा अंक ज्यादा रुचिकर होता। अंक पठनीय एवं संग्रहणीय है। आशा है, अहिंसा-प्रेमी पाठक इसका स्वागत करेंगे।

—कपिल अवस्थी

www.vinoba.in

तत्त्वज्ञान

भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरू को दी गयी फांसी तथा गणेश शंकर विद्यार्थी के आत्म-बलिदान के प्रसंगों से क्षुब्ध कराची-कांग्रेस-अधिवेशन के लोगों को सम्बोधित करते हुए २६ मार्च १९३१ को गांधीजी ने कहा था :—

"जो तरुण यह ईमानदारी से समझते हैं कि मैं हिन्दुस्तान का नुकसान कर रहा हूँ, उन्हें अधिकार है कि वे यह बात संसार के सामने चिल्ला-चिल्लाकर कहें। पर तलवार के तत्त्वज्ञान को हमेशा के लिए तलाक दे देने के कारण मेरे पास अब केवल प्रेम का ही प्याला बचा है, जो मैं सबको दे रहा हूँ। अपने तरुण मित्रों के सामने भी अब मैं यही प्याला पकड़े हुए हूँ....।"

उसके बाद का इतिहास साक्षी है कि देश ने तलवार के तत्त्वज्ञान को तलाक देनेवाले गांधी का साथ दिया। साम्राज्य-वाद की नींव हिली, भारत में लोकतंत्र की नींव पड़ी और संसार को मुक्ति का एक नया रास्ता मिला।

संसार आज बन्दूक की नाली के तत्त्वज्ञान से और अधिक त्रस्त हुआ है। विनोबा संसार को वही प्रेम का प्याला पिलाकर बन्दूक के तत्त्वज्ञान को तलाक दिलाना चाहता है और देश में सच्चे स्वराज्य की स्थापना के लिए उसने नया रास्ता बताया है।

क्या हम वक्त को पहचानेंगे और महान कार्य में वक्त पर योग देंगे ?

गांधी रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति (राष्ट्रीय गांधी-जन्म-शताब्दी-समिति)
टुंकलिया भवन, कुन्दीगरों का मैदान, जयपुर-३ राजस्थान द्वारा प्रसारित।

www.vinoba.in

संताल परगना में जिलादान-अभियान तीव्रतर

जिले का लगभग पूरा गैर आदिवासी क्षेत्र ग्रामदान में शामिल

— आदिवासियों में व्याप्त कुछ भ्रामक धारणाओं को दूर करने का प्रयत्न जारी—

देवघर। हमारे विशेष प्रतिनिधि की सूचना के अनुसार बिहार के संताल परगना जिले में जिलादान का अभियान जोरों से चल रहा है। २९ मई '६९ तक के प्राप्त आंकड़ों के अनुसार जिले की स्थिति निम्न प्रकार है।

१. अनुमण्डल जामताड़ा के कुल चारों प्रखंडों का प्रखण्डदान हो चुका है।

२. अनुमण्डल देवघर में प्रखण्ड मधुपुर, सारवां, मोहनपुर, सारठ भी पूरे हो चुके हैं; शेष तीन में देवघर का ७०%, पालोजोरी का ४०% तथा करौं का ३५% काम हुआ है, अभियान जारी है।

३. अनुमण्डल गोड्डा में प्रखण्ड सुन्दरपहाड़ी, बोआरीजोर, नेहरवां, महगांवा, पत्थरगांवा, पौड़ियाहाट पूरे हो चुके हैं। गोड्डा के कुल २०० गांवों में से ६३ गांव हो चुके हैं। शेष गांवों को, जो आदिवासियों के हैं, ग्रामदान में लाने का प्रयत्न चल रहा है।

४. अनुमण्डल राजमहल का बोरिओ प्रखण्डदान हो चुका है, बड़हरवा में ७०% और साहेबगंज में ६०% काम हुआ है। शेष आदिवासियों के प्रखण्ड बरहेट, पतना, राजमहल, कालाझारी में आदिवासियों में व्यापक रूप से व्याप्त भ्रम के निवारण का प्रयास चल रहा है।

५. अनुमण्डल पाकुड़ के प्रखण्ड महेशपुरराज और पाकुड़िया में क्रमशः ४०% और ३०% काम पूरा हुआ है, शेष प्रखण्ड पाकुड़, आमरा पाड़ा, लिट्टीपाड़ा, हरेनपुर, जो आदिवासियों के हैं, अभी नहीं हो सके हैं।

६. अनुमण्डल दुमका का प्रखण्ड रानेश्वर हो चुका है। मसलिया में ६०%, जड़मुण्डी में ६०%, सरैयाहाट में ४०% काम हो चुका है, शेष शिकारीपाड़ा, काठीकुण्ड, गोपीकान्दर, रामगढ़, जामा आदिवासियों के प्रखण्डों का काम बाकी है।

संताल परगना बिहार के सबसे बड़े जिलों में से है। मुख्य आबादी आदिवासियों की है। मिशन (रोमन कैथलिक) का काम सघन रूप से फैला है। आदिवासियों के सांस्कृतिक और धार्मिक ही नहीं, आर्थिक और राजनीतिक जीवन में भी इनका प्रभाव है, और एक तरह से मिशन के लोग ही उनके दिशा-निर्देशक हैं। सहानुभूति होते हुए भी मिशनवालों का अभी तक ग्रामदान आन्दोलन में सक्रिय योगदान नहीं प्राप्त हो सका है। दूसरी ओर गैर आदिवासी लोगों द्वारा आदिवासी लोगों का जो शोषण हुआ है, उसके कारण भी उनमें व्यापक असन्तोष व्याप्त है। उनके अन्दर यह भ्रामक धारणा फैल गयी है कि यह 'दिक्कू' (गैर आदिवासियों) का आन्दोलन है, जो आदिवासियों के हित में नहीं है। इस कारण यहां आदिवासियों में काम तेजी से आगे नहीं बढ़ पा रहा है। प्रयास जारी है कि लोगों के अन्दर व्याप्त इस गलत धारणा का निराकरण हो, और सही स्थिति सामने आये।

जिले के विकास पदाधिकारी तथा शिक्षक लोग पूरी निष्ठा से काम में लगे हैं। पड़ैयाहाट और गोड्डा के विकास पदाधिकारियों से हमारे प्रतिनिधि ने प्रत्यक्ष मुलाकात की, और उनसे बातचीत करने पर इस नतीजे पर पहुँचा कि ये कर्मचारी अपनी स्वतंत्र हैसियत से आन्दोलन के एक कार्यकर्ता की तरह पूरी निष्ठा से काम में लगे हैं; और अच्छी तरह विचार समझाकर ही ग्रामदान प्राप्त करते हैं।

पड़ैयाहाट के विकास पदाधिकारी ने तो हमारे प्रतिनिधि के एक प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा, "साहब, इस काम से हमारी नौकरी में न तो तरक्की होने वाली है, और न हमें कोई खास प्रतिष्ठा ही मिलनेवाली है, लेकिन फिर भी मैं काम में लगा हूँ, क्योंकि मुझे अनुभव हो रहा है कि इससे ही विकास के काम की बुनियाद बन सकेगी। दूसरी बात कि विनोबाजी की प्रेरणा हमें चुप-बैठने नहीं देती। उन्होंने हमारी सभा में कहा था—'जो विचार नहीं समझता है, और काम नहीं करता है, वह अज्ञानी है, लेकिन जो विचार समझता है, फिर भी काम नहीं करता, वह अपराधी है।' दूसरी बात उन्होंने कही थी, 'सभी सरकारी कर्मचारी सर्वोदय कार्यकर्ता हैं, क्योंकि उन्हें जाति, धर्म, पंथ, पक्ष आदि संकुचित सीमाओं से परे होकर मनुष्य के नाते मनुष्य की सेवा करनी होती है।'—तो ये दोनों बातें दिल में पैठ गयी हैं, और हमें चुपचाप बैठने नहीं देतीं।"

संताल परगना खादी ग्रामोद्योग समिति के मंत्री श्री लक्खीभाई अपने साथियों सहित रातदिन एक करके काम में लगे हैं। जिले के सम्मान्य नेता श्री मोतीलाल केजरीवाल भी पूरे उत्साह से काम में लगे थे, अभी अस्वस्थ हो जाने के कारण इलाज में हैं।•

ऋग्वेद-सार

भागवत धर्म-सार, नामघोषा-सार, कुरान-सार, मनु-शासनम्, खिस्त धर्म-सार आदि की श्रेणी में "ऋग्वेद-सार" भी प्रकाशित हो गया है।

यह सर्वविदित है कि ऋग्वेद विश्व का प्राचीनतम आध्यात्मिक मंत्र संग्रह (अनुभूति-स्फुरण) है। इस पर गत ५१ साल से विनोबाजी का मनन-चिंतन चल रहा है। उसका प्रकट परिणाम है उपर्युक्त "ऋग्वेद-सार"। मूल ग्रन्थ का आठवां हिस्सा इसमें संगृहित है। केवल मूल मंत्र ही दिये गये हैं। इस सम्बन्ध में विनोबाजी की यह राय है—"शब्द प्रमाण है। अर्थ तो अनन्त हो सकते हैं। और इसलिए अर्थ देने का सुख नहीं रहा। ऋषियों का मुख्य उपकार है, उन्होंने हमें शब्द दिये।"

मूल्य : साधारण संस्करण : रु० ३) | डाकखर्च
विशिष्ट संस्करण : रु० ५) | अलग

परमधाम प्रकाशन
पो० पवनार, जि० वर्धा (महाराष्ट्र)

एक सप्ताह में जिलादान प्राप्त करने का अभूतपूर्व प्रयास

उत्तरप्रदेश के फर्रुखाबाद जिले में सोलह सौ कार्यकर्ता एक साथ अभियान में जुटे

—सम्पूर्ण जिले में ग्रामदान का महातूफान प्रारम्भ—

फर्रुखाबाद (उ० प्र०)—उत्तरप्रदेश में फर्रुखाबाद जिला सर्वोदय विचारवाला जिला है। यहाँ के जिला परिषद के अध्यक्ष श्री कालीचरण टण्डन, जो कि उत्तरप्रदेशीय पंचायतराज के भी कार्यकारी अध्यक्ष हैं, भूदान आन्दोलन के प्रारंभिक समय से ही सर्वोदय आन्दोलन में विशेष रुचि लेते रहे हैं और कार्यक्रमों में भाग लेते हुए योगदान करते रहे हैं। जबसे ग्रामदान का आन्दोलन चला, तबसे उनकी तीव्र इच्छा और प्रयत्न रहा है कि जल्दी-से-जल्दी फर्रुखाबाद जिला-दान हो जाय।

इस जिले में १४ ब्लाक थे जिनका विलीनीकरण होकर अब १० ब्लाकों में जिला विभक्त है। १. मुहम्मदाबाद, २. राजेपुर, ३. कमाल गंज, ४. उमेरदह, ५. कन्नौज, ६. छिबरामऊ, ७. तालग्राम, ८. हसेरन, ९. कायमगंज, और १०. शमसाबाद। इन ब्लाकों में कुल राजस्व गाँव १७०८ हैं। ३० अप्रैल तक इस जिले में ८३५ ग्रामदान हो चुके हैं। एक ब्लाक करीब-करीब पूरा हो गया था।

पूरे जिले में एक साथ अभियान चलाकर जिलादान पूरा करने के लिए शिविर किये गये हैं। सभी ब्लाकों के सभी गाँवों में एक साथ अभियान चले, इस योजना को सम्पन्न करने के लिए करीब १४०० शिक्षक और खादी व अन्य रचनात्मक कार्यों में लगे हुए २०० कार्यकर्ताओं ने ९ शिविरों में ३०, ३१ मई को शिक्षण प्राप्त किया। शिविरों का उद्घाटन और मुख्य शिक्षण सर्व श्री धीरेन्द्र भाई, राजाराम भाई, कपिल भाई, रामजी भाई, लक्ष्मीन्द्र प्रकाश, रामजीवन शुक्ला, कामतानाथ गुप्त (रिटायर्ड जज) ने किया। शिविरों में २ दिन तक भली-भाँति प्रशिक्षण और अभ्यास जारी रहा। सभी ब्लाकों में १ जून '६९ को ७ जून तक के लिए सैकड़ों टोलियाँ "जय जगत" का नारा लगाती हुई क्षेत्र में चली गयीं। सारे जिले में एक अभूतपूर्व दृश्य और उत्साह दीख रहा है। सारा जिला ग्रामदान ग्रामस्वराज्य-मय-सा लगता है। इन शिविरों में गाँवों के बहुत से प्रधान और प्रतिष्ठित नागरिकों ने शामिल होकर अपनी शंकाओं का समाधान प्राप्त किया। शिविरों का प्रबंध स्थानीय सहयोग, धन व अन्न प्राप्त करके शिक्षकों के अभिक्रम ने किया। ग्रामदान में शामिल होने के लिए और अपना पूर्ण सहयोग देने के लिए जिला परिषद के अध्यक्ष के हस्ताक्षर से सारे जिले में नोटिस वितरित की गयी है। पूर्व तैयारी के लिए जितने भी फोल्डर, पोस्टर, ग्रामदान-सम्बन्धी विचार साहित्य उपलब्ध था, प्रसारित किया गया है।

इस जिलादान-अभियान से आशा बँधी है कि जिस उत्साह और लगन के साथ कार्यकर्ताओं ने प्रस्थान किया है, जिले के १० ब्लाकों का प्रखण्डदान पूर्ण होकर ७ जून को जिलादान पूरा हो जायेगा।•

पूर्णिया जिला ग्रामस्वराज्य शिविर

कटिहार में गत २५, २६, २७ मई को जिला गांधी शताब्दी समिति की ओर से एक ग्रामस्वराज्य शिविर आयोजित किया गया। शिविर में २५, २६ को आचार्य राममूर्ति का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ।

जिलादान के बाद अब पूर्णिया जिले में ग्रामस्वराज्य की स्थापना के लिए क्या कार्यक्रम शुरू किये जायँ, यह चर्चा का मुख्य विषय था। कार्यकर्ताओं ने, जिलादान के बाद ग्रामस्वराज्य की दिशा में बहुत कुछ काम नहीं हो पाया, इस पर असंतोष जाहिर किया, और चिंता व्यक्त की कि अगर हमारा काम तेजी से आगे नहीं बढ़ा तो नक्सलपंथी बाजी मार ले जायेंगे और हम देखते रह जायेंगे।

आचार्य राममूर्ति ने उनके समक्ष ग्रामस्वराज्य का पूरा चित्र प्रस्तुत करते हुए हर कार्यकर्ता को अपना एक सघन क्षेत्र बनाकर उसमें जी-जान से जुट जाने की अपील की। आपने कहा कि ग्रामस्वराज्य की स्थापना के लिए गाँव की शक्ति बढ़ाने का काम जरूरी है। बिना गाँव की शक्ति बढ़े और सक्रिय हुए ग्रामस्वराज्य नहीं होगा। आशा है, इस शिविर के बाद इस दिशा में ठोस काम हो सकेगा।•

शमसाबाद में बलिदान की प्रथा बंद

आगरा जिले के प्रखण्डदानी क्षेत्र में १००वर्षों से चले आ रहे देवी मेले में प्रतिवर्ष ४००-५०० पशुओं के बलिदान की प्रथा को इस वर्ष सर्वोदय कार्यकर्ताओं ने बन्द करा दिया। प्राप्त सूचना के अनुसार सर्वोदय कार्यकर्ता श्री चिमनलाल के नेतृत्व में ८० कार्यकर्ताओं ने वहाँ जाकर इस प्रथा के विरुद्ध प्रचार, लोक-शिक्षण, तथा प्रतिरोध का कार्यक्रम किया, जिससे यह प्रथा शान्तिपूर्ण ढंग से बन्द हो गयी।

भूल-सुधार

कृपया २ जून के 'भूदान-यज्ञ' में सम्पादकीय के कालम एक में नीचे से ६ठीं पंक्ति में 'सहायता' शब्द की जगह 'समझ'; ४३७ पृष्ठ पर अन्त में १२-४-'६९ की जगह १२-५-'६९; ४४० पृष्ठ पर पहले कालम के आखिरी पंक्ति में 'श्री कपिल भाई ने ग्रामस्वराज्य की स्थापना पर जोर दिया।'—पढ़ें। भूल के लिए क्षमा-याचना।—सम्पादक

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति : २० पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित।